विशद पंच मेरु विधान (संस्कृत)
अपरनाम
श्री पुष्पाजंलि व्रत विधान (हिन्दी)

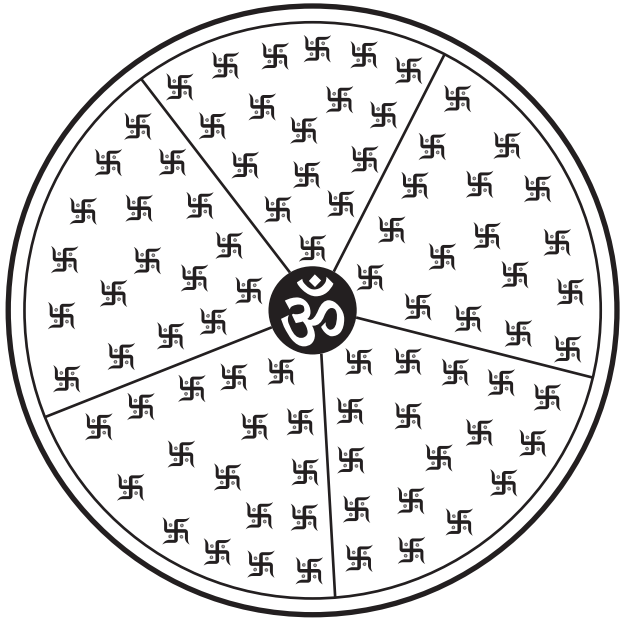

रचयिता :
प. पू. क्षमामूर्ति 108 आचार्य श्री विशदसागर जी

कृति – **विशद श्री पुष्पांजलि व्रत पूजा विधान**

रचयिता – प. पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज

संस्करण – प्रथम-2018, प्रतियाँ – 1000

सम्पादन . मुनि 108 श्री विशाल सागर जी महाराज

सहयोग – आर्यिका श्री भक्तिभारती माताजी
ऐलक श्री विदक्ष सागर जी, क्षुल्लक श्री विसौम सागर जी
क्षुल्लिका श्री वात्सल्य भारती माताजी

संकलन – ज्योति दीदी-9829076085, आस्था दीदी
सपना दीदी-9829127533, आरती दीदी-8700876822

कम्पोजिंग – आरती दीदी-8700876822

प्राप्ति स्थल – 1. सुरेश जैन सेठी, शांति नगर, जयपुर – 9413336017
2. हरीश जैन, दिल्ली – 9136248971
3. महेन्द्र कुमार जैन, सैक्टर-3 रोहिणी – 09810570747
4. पदम जैन, रेवाड़ी – 09416888879
5. श्री सरस्वती पेपर स्टोर, चांदी की टकसाल, जयपुर
मो.: 8561023344, 8114417253

पुण्यार्जक :
अरविन्द कुमार - आभा जैन
आकाश जैन, श्री दिव्या जैन अमित जैन
श्योपुर (मध्यप्रदेश)
मो.: 9755757486

मुद्रक – बसन्त जैन, श्री सरस्वती प्रिन्टिंग इण्स्ट्रीज, SBI के नीचे, चांदी की टकसाल, जयपुर – मो.: 8114417253, 8561023344
ईमेल : jainbasant02@gmail.com

मूल्य – 70/- रु. मात्र

विशद पंच मेरु विधान (संस्कृत)
अपरनाम
श्री पुष्पाजंलि व्रत विधान (हिन्दी)

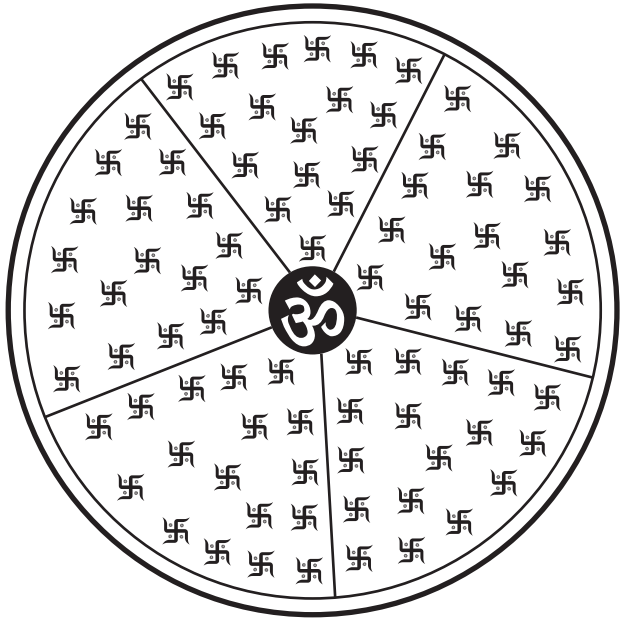

रचयिता :
प. पू. क्षमामूर्ति 108 आचार्य श्री विशदसागर जी

कृति – **विशद श्री पुष्पांजलि व्रत पूजा विधान**

रचयिता – प. पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज

संस्करण – प्रथम-2018, प्रतियाँ – 1000

सम्पादन . मुनि 108 श्री विशाल सागर जी महाराज

सहयोग – आर्यिका श्री भक्तिभारती माताजी
ऐलक श्री विदक्ष सागर जी, क्षुल्लक श्री विसौम सागर जी
क्षुल्लिका श्री वात्सल्य भारती माताजी

संकलन – ज्योति दीदी-9829076085, आस्था दीदी
सपना दीदी-9829127533, आरती दीदी-8700876822

कम्पोजिंग – आरती दीदी-8700876822

प्राप्ति स्थल – 1. सुरेश जैन सेठी, शांति नगर, जयपुर – 9413336017
2. हरीश जैन, दिल्ली – 9136248971
3. महेन्द्र कुमार जैन, सैक्टर-3 रोहिणी – 09810570747
4. पदम जैन, रेवाड़ी – 09416888879
5. श्री सरस्वती पेपर स्टोर, चांदी की टकसाल, जयपुर
मो.: 8561023344, 8114417253

पुण्यार्जक :
रतनलाल, चन्द्रशेखर जैन - वर्धमान, ऋषभ जैन
(हवली राम परिवार)
किशनगढ़ बास, अलवर (राजस्थान)
मो.: 9413419367

मुद्रक – बसन्त जैन, श्री सरस्वती प्रिन्टिंग इण्स्ट्रीज, SBI के नीचे, चांदी की टकसाल, जयपुर – मो.: 8114417253, 8561023344
ईमेल : jainbasant02@gmail.com

मूल्य – 70/- रु. मात्र

अर्चन के सुमन

संसार दुःखों का समूह है। दुःखों से बचने के लिए प्राणी हमेशा प्रयत्नशील रहता है। यह प्रयत्न कभी अनुकूल तो कभी प्रतिकूल होते हैं। अनुकूल अर्थात् सम्यक् प्रयत्न ही दुःख दूर करने में समर्थ होते हैं। दुःखों का अंतरंगकारण हमारी राग–द्वेष रूप परिणति है एवं बाह्य कारण कर्मोदय है। कर्मोदय के अनुसार अनुकूल–प्रतिकूल निमित्त मिलते रहते हैं और जीव दुःख का वेदन करता रहता है इसलिए कवि ने लिखा है–

संसार में सुख सर्वदा काहूँ को न दीखे।
कोई तन दुखी, कोई मन दुखी, कोई धन दुखी दीखे।।

ऐसी स्थिति में लोगों को जिनधर्म से जुड़कर देव–शास्त्र–गुरु की पूजा,आराधना ही सर्वोपरि है। पुण्य संचय हो और इंसान सुखी और समृद्ध हो एवं सम्यक्त्व को प्राप्त कर परम्परा से रत्नत्रय का आराधन कर मोक्ष प्राप्त कर सके। इस हेतु चिंतन के बिखरे पुष्पों को समेटकर चित्त को चैतन्यता की ओर ले जाने के लिए ज्ञानवारिधि गुरुवर श्री विशदसागर जी महाराज ने 'लघु पंचपरमेष्ठी विधान'के माध्यम से शब्द पुंजों को सरल भाषा में संचित किया है। क्योंकि कहते है कि–

प्रभु भक्ति से नूर खिलता है।
गमे दिल को सरूर मिलता है।।
जो आता है सच्चे मन से द्वार पर।
उसे कुछ न कुछ जरुर मिलता है।।

आचार्य श्री की तपस्तेज सम्पन्न एवं प्रसन्न मुखमुद्रा प्रायः सभी का मन मोह लेती है। आचार्य श्री के कण्ठ में साक्षात् सरस्वती का निवास है। इसे भगवान का वरदान कहें या पूर्व पुण्योदय समझ में नहीं आता। आचार्य श्री को पाकर सारी जैन समाज गौरवान्वित है। आचार्य श्री के द्वारा अब तक 200 विधानों की रचना की जा चुकी है। आचार्य श्री का गुणगान करना तो कदाचित् संभव ही नहीं है। गुरुवर के चरणों में अंतिम यही भावना है कि–

जिनका दर्शन भवि जीवों में, सत् श्रद्धान जगाता है।
उपदेशामृत जिनका जग में, सद्धर्म की राह दिखाता है।।
उन विशद सिन्धु के श्री चरणों में, सादर शीश झुकाते हैं।
हम चले आपके कदमों पर, यह विशद भावना भाते हैं।।

– **ब्र. आरती दीदी** (संघस्थ आ. विशद सागर जी महाराज)

श्री पुष्पांजलि व्रत कथा

नमो सिद्ध परमात्मा, सकल सिद्धि दातार।
पुष्पांजलि व्रतकी कथा, कहू भव्य सुखकार।।

जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह में सीता नदी के दक्षिण तटपर मंगलावती देश में रत्नसंचयपुर नाम का एक नगर है। वहां का राजा वज्रसेन अपनी जयावती रानी सहित सानन्द राज्य करता था, परन्तु घर में पुत्र न होने के कारण उदास रहता था। सो एक दिन वह राजा जय रानी सहित जिन मंदिर में दर्शन करने को गया, तो वहां उसने ज्ञानसागर मुनिराज को बैठे देखा, और भक्ति सहित उनकी पूजा वन्दना करके धर्मोपदेश सुना।

पश्चात् अवसर पाकर विनय सहित राजा ने पूछा- हे प्रभु! हमारी रानी के पुत्र न होने से यह अत्यन्त दुःखित रहती है, सो क्या इसके कोई पुत्र होगा? तब मुनिराज ने विचार कर कहा-राजा! चिंता न करो, इसके अत्यन्त प्रभावशाली पुत्र होगा, जो चक्रवर्ती पद प्राप्त करेगा।

यह सुनकर राजा रानी हर्षित होकर घर आये और सुख से रहने लगे, पश्चात्, कुछ दिनों के बाद रानी को शुभ स्वप्न हुए, और एक देव स्वर्ग से रानी के गर्भ में आया। और नव मास पूर्ण होने पर रत्न-शेखर नाम धारी सुन्दर पुत्र हुआ। एक दिन रत्नशेखर अपने मित्रों के साथ जब क्रीड़ा कर रहा था तब इसे आकाश मार्ग से जाते हुए मेघवाहन नाम के विद्याधर ने देखा सो देखते ही प्रेम से विह्वल होकर नीचे आया और राजपुत्र को अपना परिचय देकर उसका मित्र बन गया। ठीक है- ''पुण्य से क्या नहीं होता है?''

पश्चात् राजपुत्र ने भी उसे अपना परिचय देकर मेरुपर्वत की वन्दना करने की इच्छा प्रगट की। तब मेघवाहन बोला- हे कुमार! हमारे विमान में बैठकर चलो, परन्तु रत्नशेखर ने यह स्वीकार नहीं किया और कहा कि मुझे ही विमान रचना की विधि या मन्त्र बताओ। सो विद्याधर ने ऐसा ही किया तब कुमार ने मित्र विद्याधर की सहायता से 500 विद्याएं साधीं पश्चात् मेघवाहनादि मित्रों सहित ढाई द्वीप के समस्त जिन मन्दिरों की वन्दनाथ प्रस्थान किया। सो विजयार्घ पर्वत के सिद्धकूट चैत्यालय में पूजा

स्तवन करके रंगमण्डप में बैठा था, कि इतने में दक्षिण श्रेणी रथनूपुर नगर की राजकन्या मदनमंजूषा भी दर्शनार्थ सखियों सहित वहां आई, और रत्नशेखर को देखकर मोहित हो गई, परन्तु लज्जावश कुछ कह न सकी, और खेदितचित्त होकर घर लौट गई।

राजा रानी ने उसके खेद का कारण जानकर स्वयंवर मण्डप रचा, और सब राजपुत्रों को आमंत्रण दिया, सो शुभ तिथि में बहुत से राजपुत्र वहां आये, उनमें रत्नशेखर भी आया। जब कन्या वरमाला लेकर आई तो उसने रत्नशेखर के ही कण्ठ में यह वरमाला डाली। इस पर विद्याधर राजा बहुत बिगड़े कि यह विद्याधर की कन्या है, भूमिगोचरी को नहीं ब्याह सकती है, परन्तु रत्नशेखर ने उनको युद्ध के लिये तत्पर देख सबको थोड़ी देर में जीतकर यथास्थान विदा कर दिया। इनका पराक्रम देखकर बहुत से राजा इनके आज्ञाकारी हुए, और वहीं इनको शुभोदय से चक्ररत्न की प्राप्ति भी हुई, तब छःहों खण्डों को वश में करके व कुमार चक्रवर्ती पद से भूषित होकर निज नगर में आये और पितादि गुरुजनों से मिलकर आनन्द से राज्य करने लगे।

एक दिन राजा रत्नशेखर माता पिता सहित सुदर्शनमेरु की वन्दना को गये थे सो वहां भाग्योदय से दो चारण मुनियों को देखकर भक्तिपूर्वक वन्दना स्तुति कर धर्मोपदेश सुना और अवसर पाकर अपने भवांतरों का कथन पूछा तथा यह भी पूछा, कि मदनमंजूषा और मेघवाहन का मुझ पर अत्यन्त प्रेम क्यों है?

तब श्री मुनि ने कहा- राजा सुनो! इसी जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र आर्यखण्ड में भृणालपुर नाम का एक नगर है, वहां राजा जितारि और रानी कनकावती सुख से राज्य करते थे। इसी नगर में श्रुतकीर्ति नाम ब्राह्मण और उसकी बन्धुमती नाम की स्त्री रहती थी। इसके प्रभावती नाम की एक पुत्री थी जिसने जैन गुरु के पास शिक्षा पाई थी।

एक दिन ब्राह्मण सपत्नीक बन क्रीड़ा को गया था, सो वहां पर उसकी स्त्री को सांप ने काटा, और वह मर गई। तब ब्राह्मण अत्यन्त शोक से विह्वल हो गया, और उदास रहने लगा। यह समाचार पाकर उसकी पुत्री प्रभावती वहां आई और अनेक प्रकार से पिता को सम्बोधन करके बोली-

पिताजी! संसार का स्वरूप ऐसा ही है। इसमें इष्ट वियोग, अनिष्ट संयोग प्रायः हुआ ही करते हैं। यह इष्टानिष्ट कल्पना मोह भावों से होती है, यथार्थ में न कुछ इष्ट है, न अनिष्ट है, इसलिये शोक का त्याग करो।

पश्चात् प्रभावती ने अपने पिता को जैन गुरु के पास सम्बोधन कराकर दीक्षा दिला दी। सो ब्राह्मण ने प्रारम्भ में तपश्चरण किया, परन्तु पश्चात् चारित्रभ्रष्ट होकर यन्त्र तन्त्रादि के (व्यर्थ के झगड़ों) में फंस गया। विद्या के योग से नई बस्ती बसाकर उसमें घर मांडकर रहने लगा और विषयाशक्त हो स्वच्छन्द प्रवर्तने लगा। तब पुनः प्रभावती उसे सम्बोधन करने के लिये वहां गई और कहा- पिताजी! जिन दीक्षा लेकर इस प्रकार का प्रवर्तन अच्छा नहीं है। इससे इस लोक में निंदा और परलोक में दुःख सहना पड़ेंगे। यह सुनक ब्राह्मण कुपित हुआ और उसे वन में अकेली छोड़ दी। सो जहां प्रभावती नमस्कार मंत्र जपती हुई वन में बैठी थी, वहां वन देवी आई और पूछा- बेटी! तू क्या चाहती है? तब प्रभावती ने कैलाशयात्रा करने की इच्छा प्रगट की।

यह सुनकर देवी ने उसे कैलाश पर पंहुचा दिया। प्रभावती वहां भादों सुदी पांचम के दिन पहुंची थी, और उस दिन पुष्पांजलि व्रत था, इसलिये स्वर्ग तथा पातालवासी देव भी वहां पूजन वन्दनादि के लिये आये थे। सो पद्मावती देवी ने प्रभावती का परिचय पाकर कहा- बेटी! तू पुष्पांजलि व्रत कर इससे तेरा सब दुःख दूर होगा। इस व्रत की विधि इस प्रकार है कि भादों सुदी 5 से 9 तक पांच दिन तक नित्य प्रति पंचमेरु की स्थापना करके चौबीस तीर्थंकरों की अष्ट द्रव्य से पूजाभिषेक करे, पांच अष्टक तथा पांच जयमाल पढ़े और 'ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धी अस्सी जिनालयेभ्यो नमः' इस मंत्र का 108 बार जाप करे, पांचम का उपवास करे, और शेष दिनों में रस त्यागकर ऊनोदर भोजन करे। रात्रि को भजन जागरण करे, विषय कषार्यो को घटावे, ब्रह्मचर्य रखे और घर का आरम्भ त्यागे। इस प्रकार पांच वर्ष तक व्रत करके फिर उद्यापन करे, सो प्रत्येक प्रकार के उपकरण पांच पांच जिनालय में भेंट देवें, पांच शास्त्र पधरावे, पांच श्रावकों को भोजन करावें, चारों प्रकार के दान देवे, इत्यादि। यदि उद्यापन करने की शक्ति न होवे तो दूना व्रत करे।

इस प्रकार प्रभावती ने व्रत की विधि सुनकर सहर्ष स्वीकार किया,

और उसे यथाविधि 5 वर्ष तक पालन किया तथा उद्यापन भी किया इससे उसे बहुत शांति हुई। पश्चात् पद्मावती देवी ने उसे विमान में बैठाकर उसके नगर मृणालपुर में पहुंचा दिया। वहां पहुंचकर प्रभावती ने स्वयं प्रभु गुरु के पास दीक्षा ली, और तप करने लगी, सो तप के प्रभाव से उसकी बहुत प्रशंसा फैली। यह प्रशंसा उसके पिता से सहन नहीं हुई, और उसने उसे दु:ख देने को विद्याएं भेजीं। सो विद्याएं बहुत उपसर्ग करने लगीं, परन्तु प्रभावती रंच मात्र भी नहीं डिगी और अन्त में समाधिमरण करके अच्युत स्वर्ग में देव हुई। उसका नाम पद्मनाभ हुआ।

इसी बीच में मृणालपुर की एक रुकमणी नाम की श्राविका मरकर उसी देव की देवी हुई। सो वे दोनों सुख पूर्वक कालक्षेप करने लगे। एक दिन उस पद्मनाभ देव ने विचारा, कि हमारा पूर्वजन्म का पिता मिथ्यात्व में पड़ा है उसे सम्बोधन करना चाहिये। यह विचार कर उसके पास गया और अपना सब वृतान्त कहा, सो सुनकर वह बहुत लज्जित हुआ, और सब प्रपंच छोड़कर शांत चित्त हुआ। पश्चात् जिनोक्त तपश्चरण किया, और समाधि से मरण कर स्वर्ग में प्रभास देव हुआ।

सो वह पद्मनाभ देव स्वर्ग से चयकर तू रत्नशेखर चक्रवर्ति हुआ है, और पद्मनाभ की देवी तेरी मदनमंजूषा नाम की पट्टरानी हुई है। तथा प्रभास देव वहां से चयकर यह तेरा मित्र मेघवाहन विद्याधर हुआ है। सो हे राजा! तूने पूर्वजन्म में पुष्पांजलि व्रत किया जिसके फल से स्वर्ग के सुख भोगकर यहां चक्रवर्ति हुआ है, और ये दोनों भी तेरे पूर्व जन्म के सम्बन्धी हैं, इससे इनका तुझ पर परम स्नेह है।

यह सुनकर राजा ने पुष्पांजलि व्रत धारण किया और यात्रा करके घर आया, विधि सहित व्रत किया, पश्चात् बहुत काल तक राज्य करके संसार से विरक्त होकर निज पुत्र को राज्यभार सौंपकर जिन दीक्षा ले ली। और घोर तप करके केवलज्ञान प्राप्त किया तथा अनेक भव्यजीवों को धर्मोपदेश दिया। पश्चात् शेष कर्मों को नाश करके मोक्षपद प्राप्त किया। मदनमंजूषा ने भी दीक्षा ले ली, सो तप कर सोलहवें स्वर्ग में देव हुई। मेघवाहन आदि अन्य राजा भी यथायोग्य गतियों को प्राप्त हुए। इस प्रकार और भी भव्यजीव श्रद्धा भक्ति सहित व्रत पालेंगे तथा कषायों को कृश करेंगे तो वे भी उत्तमोत्तम पद को प्राप्त होंगे।

- मुनि विशाल सागर जी

श्री देव शास्त्र गुरु पूजन

स्थापना

देव-शास्त्र-गुरु पद नमन, विद्यमान तीर्थेश।
सिद्ध प्रभु निर्वाण भू, पूज रहे अवशेष।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरु विद्यमान विंशति जिन अनन्तानंत सिद्ध परमेष्ठी निर्वाण क्षेत्र समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल छन्द)

जल के यह कलश भराए, त्रय रोग नशाने आए।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।1।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

शुभ गंध बनाकर लाए, भवताप नशाने आए।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।2।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्व. स्वाहा।

अक्षत हम यहाँ चढ़ाएँ, अक्षय पदवी शुभ पाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।3।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

सुरभित ये पुष्प चढ़ाएँ, रुज काम से मुक्ती पाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।4।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

पावन नैवेद्य चढ़ाएँ, हम क्षुधा रोग विनशाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।5।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

घृत का ये दीप जलाएँ, अज्ञान से मुक्ती पाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।6।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नी में धूप जलाएँ, हम आठों कर्म नशाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।7।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे फल यहाँ चढ़ाएँ, शुभ मोक्ष महाफल पाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।8।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पावन ये अर्घ्य चढ़ाएँ, हम पद अनर्घ्य प्रगटाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।9।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं निव. स्वाहा।

दोहा - शांती धारा कर मिले, मन में शांति अपार।
अतः भाव से आज हम, देते शांती धार।।

(शान्तये शांतिधारा)

दोहा - पुष्पांजलिं करते यहाँ, लिए पुष्प यह हाथ।
देव शास्त्र गुरु पद युगल, झुका रहे हम माथ।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।)

जयमाला

दोहा - देव-शास्त्र-गुरु के चरण, वन्दन करें त्रिकाल।
'विशद' भाव से आज हम, गाते हैं जयमाल।।

(तामरस छंद)

जय-जय-जय अरहंत नमस्ते, मुक्ति वधू के कंत नमस्ते।
कर्म घातिया नाश नमस्ते, केवलज्ञान प्रकाश नमस्ते।
जगती पति जगदीश नमस्ते, सिद्ध शिला के ईश नमस्ते।
वीतराग जिनदेव नमस्ते, चरणों विशद सदैव नमस्ते।।
विद्यमान तीर्थेश नमस्ते, श्री जिनेन्द्र अवशेष नमस्ते।
जिनवाणी ॐकार नमस्ते, जैनागम शुभकार नमस्ते।
वीतराग जिन संत नमस्ते, सर्व साधु निर्ग्रन्थ नमस्ते।
अकृत्रिम जिनबिम्ब नमस्ते, कृत्रिम जिन प्रतिबिम्ब नमस्ते।।
दर्श ज्ञान चारित्र नमस्ते, धर्म क्षमादि पवित्र नमस्ते।
तीर्थ क्षेत्र निर्वाण नमस्ते, पावन पंचकल्याण नमस्ते।
अतिशय क्षेत्र विशाल नमस्ते, जिन तीर्थेश त्रिकाल नमस्ते।
शास्वत तीरथराज नमस्ते, 'विशद' पूजते आज नमस्ते।।

दोहा - अर्हतादि नव देवता, जिनवाणी जिन संत।
पूज रहे हम भाव से, पाने भव का अंत।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा - देव-शास्त्र-गुरु पूजते, भाव सहित जो लोग।
ऋद्धि-सिद्धिं सौभाग्य पा, पावें शिव का योग।।

।। इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत)।।

श्री पुष्पांजलि व्रत पूजा विधान

स्थापना

पुष्पांजलि व्रत जीव करें जो, मन में पावन श्रद्धा धार।
श्री जिनेन्द्र की अर्चा करके, पुण्य प्राप्त वे करें अपार।।
चौबिस तीर्थंकर की अर्चा, पंच मेरु की करते साथ।
पंच महाव्रत के धारी हो, बन जाते शिवपुर के नाथ।।

दोहा - भक्त पुकारें आपको, भाव सहित भगवान।
विशद हृदय में हे प्रभो !, करते हैं आह्वान।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(पाइता-छन्द)

निर्मल यह नीर चढ़ाएँ, जन्मादिक रोग नशाएँ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, इस भव से मुक्ती पाएँ।।1।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

चन्दन शुभ यहाँ चढ़ाएँ, भव का सन्ताप नशाएँ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, इस भव से मुक्ती पाएँ।।2।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्व. स्वाहा।

अक्षत से पूज रचाएँ, अक्षय पदवी को पाएँ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, इस भव से मुक्ती पाएँ।।3।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

यह पुष्प चढ़ा हर्षाएँ, हम काम रोग विनशाएँ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, इस भव से मुक्ती पाएँ।।4।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

नैवेद्य चढ़ाने लाए, हम क्षुधा नशाने आए।
हम जिनवर के गुण गाएँ, इस भव से मुक्ती पाएँ।।5।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

अग्नी में दीप जलाएँ, हम मोह से मुक्ती पाएँ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, इस भव से मुक्ती पाएँ।।6।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्व. स्वाहा।

यह सुरभित धूप जलाएँ, हम आठों कर्म नशाएँ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, इस भव से मुक्ती पाएँ।।7।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं निर्व. स्वाहा।

फल सरस चढ़ाते भाई, जो गाए मोक्ष प्रदायी।
हम जिनवर के गुण गाएँ, इस भव से मुक्ती पाएँ।।8।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्व. स्वाहा।

यह पावन अर्घ्य चढ़ाएँ, पावन अनर्घ्य पद पाएँ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, इस भव से मुक्ती पाएँ।।9।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा – श्री जिन की महिमा अगम, कोई ना पावे पार।
शांती धारा दे रहे, जिनपद बारम्बार।।

।। शान्तये शांतिधारा ।।

दोहा – कर्म बन्ध को तोड़कर, नाश करें भव ताप।
पुष्पांजलि करके प्रभो !, करे नाम का जाप।।

।। पुष्पांजलि क्षिपेत् ।।

जाप्य मंत्र –

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु सम्बन्धि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा – पुष्पांजलि व्रत कर विशद, करना जिन गुणगान।
जयमाला गाके सभी, करें स्व-पर कल्याण।।

(ज्ञानोदय-छन्द)

जम्बूद्वीप के दक्षिण दिश में, मंगलावति है देश महान।
वहाँ रत्न संचयपुर नगरी, वज्रसेन नृप रहा प्रधान।।
जयवन्ती रानी थी जिसकी, पुत्र की जिसके मन में चाह।
ज्ञानोदधि मुनि से जो पूँछी, मुझे पुत्र होगा या नाह।।1।।
मुनि बोले तव चक्रवर्ति सुत, छह खण्डों का होगा स्वामि।
मुनि के वचन प्रमाण हुए नव, मास में सुत पाया जो नामि।।
नाम रत्नशेखर पाया जो, मित्र मेघ वाहन था साथ।
मदन मंजूसा कन्या ब्याही, विद्या पाँच सौ का भी नाथ।।2।।
एक बार चारण ऋद्धीधर, मुनिवर का पाया वह दर्श।
धर्मोपदेश सुना मुनिवर से, पूछा पूर्व जन्म पा हर्ष।।
श्रुत कीर्ति मंत्री की वनिता, वंधुमती था नगर मृणाल।
सर्प दंश से वन्धुमती का, मरण देख जो हुआ बेहाल।।3।।
हो विरक्त दीक्षा वह धारी, भ्रष्ट हुआ किन्तू पश्चात्।
प्रभावती पुत्री तब बोली, किए आप क्यों संयम घात।।
तब वह विद्या से पुत्री को, वन में छोड़ दिलाया त्रास।
अर्हत् भक्ती की उसने तो, विद्या भेजी गिरि कैलाश।।4।।
देव देवियाँ पद्मावति के, आने का कारण क्या राज।
पद्मावती कही भादों सुदि, पाँचे पुष्पांजलि व्रत आज।।
पांच दिना प्रोषध विधि करके, पाँच वर्ष व्रत कर चौबीस।
जिन की पुष्पों से कर अर्चा, चरणों विशद झुकाएँ शीश।।5।।
प्रभावती ने पुष्पाँजलि व्रत, धारे मन में धर उल्लास।
विद्या श्रुत कीर्ति भेजी तव, व्रत को करने हेतु विनाश।।
पद्मावति के आते विद्या, भाग गई डर के तत्काल।
कर सन्यास मरण सोलहवें, स्वर्ग में उपजी तब वह बाल।।6।।
श्रुत कीर्ति के सम्बोधन को, स्वर्ग से आया फिर वह देव।
माता स्वर्ग गई थी पहले, पिता स्वर्ग वह पहुँचा एव।।
प्रभावती तू रत्नशेखर है, मदन मंजूषा माँ का जीव।
मेघ वाहन मंत्री पितु तेरा, व्रत का फल शुभ रहा अतीव।।7।।

दोहा - चक्रवर्ति सन्यास धर, मुनि त्रिगुप्ति के पास।
कर्म नाश नृप मंत्रि द्वय, पाए शिवपुर वास।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालय जिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा - पुष्पांजलि व्रत कर 'विशद', पाएँ सौख्य अनूप।
कर्मनाश कर सिद्ध हों, पावें निज स्वरूप।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

सुदर्शन मेरू पूजा-1

स्थापना

जम्बूद्वीप के मध्य है, मेरु सुदर्शन नाम।
जिसमें सोलह बिम्ब जिन, का करते आह्वान।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्ब समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

पूजा (सखी छन्द)

यह नीर के कलश भराए ,पूजा करने को आए।
हैं सोलह जिनगृह भाई, हम पूज रहे शिवदायी।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः जलं नि.स्वाहा।

चन्दन यह श्रेष्ठ चढ़ाएँ, भव रोग से मुक्ती पाएँ।
हैं सोलह जिनगृह भाई, हम पूज रहे शिवदायी।।2।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः चंदनं नि.स्वाहा।

अक्षत से पूज रचाएँ, अक्षय पदवी को पाएँ।
हैं सोलह जिनगृह भाई, हम पूज रहे शिवदायी।।3।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं नि.स्वाहा।

यह पुष्प चढ़ा हर्षाएँ, अब काम रोग विनशाएँ।
हैं सोलह जिनगृह भाई, हम पूज रहे शिवदायी।।4।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं नि.स्वाहा।

नैवेद्य चढ़ाने लाए, अब क्षुधा नशाने आए।
हैं सोलह जिनगृह भाई, हम पूज रहे शिवदायी।।5।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं नि.स्वाहा।

पावन ये दीप जलाएँ , हम मोह रोग विनशाएँ।
हैं सोलह जिनगृह भाई, हम पूज रहे शिवदायी।।6।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः दीपं नि.स्वाहा।

अग्नी में धूप जलाते, वसु कर्म नाश हो जाते।
हैं सोलह जिनगृह भाई, हम पूज रहे शिवदायी।।7।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः धूपं नि. स्वाहा।

फल ताजे यहाँ चढ़ाएँ, मुक्ती फल हम भी पाएँ।
हैं सोलह जिनगृह भाई, हम पूज रहे शिवदायी।।8।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः फलं नि.स्वाहा।

यह अर्घ्य बनाकर लाए, पाने अनर्घ्य पद आए।
सोलह जिनगृह भाई, हम पूज रहे शिवदायी।।9।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

अर्घ्यावली

दोहा - मेरु सुदर्शन में रहे, सोलह श्री जिनधाम।
पुष्पांजलि करते यहाँ, करने को गुणगान।।

।। प्रथम कोष्ठोपरि पुष्पांजलि क्षिपेत् ।।

(अर्द्ध शम्भू-छन्द)

जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरू, भद्रशाल वन पूरव जान।
जिन मंदिर में जिन प्रतिमा को, मेरा बारम्बार प्रणाम।।1।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि भद्रशाल वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जम्बूद्वीप मेरु के दक्षिण, भद्रशाल वन में अविराम।
जिन मंदिर में जिन प्रतिमा को, मेरा बारम्बार प्रणाम।।2।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि भद्रशाल वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मेरु सुदर्शन जम्बूद्वीप में, भद्रशाल पश्चिम दिश मान।
जिन मंदिर में जिन प्रतिमा को, मेरा बारम्बार प्रणाम।।3।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि भद्रशाल वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जम्बूद्वीप मेरु के उत्तर, भद्रशाल वन की शुभ शान।
जिन मंदिर में जिन प्रतिमा को, मेरा बारम्बार प्रणाम।।4।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि भद्रशाल वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरू, नन्दन वन पूरव दिश जान।
जिन मंदिर में जिन प्रतिमा को, मेरा बारम्बार प्रणाम।।5।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि नंदन वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जम्बूद्वीप मेरु के दक्षिण, नंदन वन में आभावान।
जिन मंदिर में जिन प्रतिमा को, मेरा बारम्बार प्रणाम।।6।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि नंदन वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मेरु सुदर्शन जम्बूद्वीप में, नन्दन वन पश्चिम दिश मान।
जिन मंदिर में जिन प्रतिमा को, मेरा बारम्बार प्रणाम।।7।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि नंदन वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जम्बूद्वीप मेरु के उत्तर, नन्दनवन में आलीशान।
जिन मंदिर में जिन प्रतिमा को, मेरा बारम्बार प्रणाम।।8।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि नंदन वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरू, पूर्व सौमनस वन शुभकार।
जिसमें जिनगृह जिन प्रतिमा को, वन्दन मेरा बारम्बार।।9।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि सौमनस वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जम्बूद्वीप में मध्य मेरु के, दक्षिण दिश में वन शुभ कार।
जिसमें जिनगृह जिन प्रतिमा को, वन्दन मेरा बारम्बार।।10।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि सौमनस वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरू, वन पश्चिम दिश मंगलकार।
जिसमें जिनगृह जिन प्रतिमा को, वन्दन मेरा बारम्बार।।11।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि सौमनस वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जम्बूद्वीप मेरु के उत्तर वन, सुमनस है अतिशयकार।
जिसमें जिन गृह जिन प्रतिमा को, वन्दन मेरा बारम्बार।।12।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि सौमनस वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व.स्व.।

तर्ज–जिनेश्वर पूजो हो भाई...

(टप्पा चाल)

जम्बूद्वीप में मेरु सुदर्शन, पाण्डुक वन भाई।
पूर्व दिशा में जिनगृह जिनपद , पूजें सुखदाई।।13।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि पाण्डुक वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मेरु सुदर्शन जम्बूद्वीप में, पाण्डुक वन भाई।
दक्षिण दिश में जिनगृह जिनपद, पूजें सुखदाई।।14।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि पाण्डुक वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जम्बूद्वीप में मेरु सुदर्शन, पाण्डुक वन भाई।
पश्चिम दिश में जिनगृह जिनपद, पूजें सुखदाई।।15।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि पाण्डुक वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मेरु सुदर्शन जम्बूद्वीप में, पाण्डुक वन भाई।
उत्तर दिश में जिनगृह जिनपद, पूजें सुखदाई।।16।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि पाण्डुक वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

चार वनों की चार दिशा में, सोलह जिनगृह रहे महान।
उनमें जो जिनबिम्ब विराजित, जिनका हम करते गुणगान।।17।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय सर्वजिनबिम्बेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

1728 जिन प्रतिमा का पूर्णार्घ

चार वनों में मेरु सुदर्शन, के गाये सोलह जिनधाम।
जिनमें सत्रह सौ अट्ठाइस, जिनबिम्बों पद विशद प्रणाम।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, अर्चा करते महति महान।
भक्ति भाव से श्री जिनवर का, आज यहाँ करते गुणगान।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय मध्य विराजमान एक सहस्र सप्तशताष्टाविंशति जिनप्रतिमाभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यो नम:।

जयमाला

दोहा - मेरु सुदर्शन में रहे, सोलह श्री जिनधाम।
जयमाला गाते विशद, करके चरण प्रणाम।।

''तर्ज-चौपाई''

मेरु सुदर्शन है शुभकारी, इन्द्र समान रहा अधिकारी।
इसकी महिमा प्राणी गाते, देख-देख जिसको हर्षाते।।1।।
जम्बू द्वीप के मध्य में सोहे, जन-जन के मन को जो मोहे।
एक लाख योजन ऊँचाई, स्वर्ण रंग सोहे शुभ भाईं।।2।।
रहे चार वन जिसमें प्यारे, हरे भरे शोभित हैं सारे।
भद्रशाल वन पहला गाया, दूजा नन्दन वन कहलाया।।3।।
तृतिय वन सुमनस शुभ जानो, पाण्डुक वन चौथा पहिचानो।
चारों वन की चार दिशाएँ, जिनमें जिनगृह शोभा पाएँ।।4।।
मूल सुमेरू वज्रमयी हैं, मध्य भाग शुभ रत्न मयी हैं।
पाण्डुक वन में चार शिलाएँ, क्रमशः चारों यह कहलाएँ।।5।।
पाण्डुक पाण्डु कम्बला जानो, रक्ता रक्त कम्बला मानो।
वज्रमूक मणि चित्र कहाए, सुरगिरि मंदर मेरू गाए।।6।।
लोकनेमि प्रिय दर्शन जानो, सूर्याचरण मनोरम मानो।
और सुरालय आदिक गाये, मेरू के शुभ नाम बताए।।7।।
पुष्पांजलि शुभ व्रत के धारी, पूजा करते न्यारी-न्यारी।
पंच मेरु व्रत करने वाले, भाव से पूजा करें निराले।।8।।

दोहा - मेरु सुदर्शन पर श्री, जिनवर का अभिषेक।
इन्द्र करें शुभ भाव से, धारें परम विवेक।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन मेरु संबंधि षोडश जिनालय सर्व जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा - जिनवर का अभिषेक हम, ''विशद'' भाव के साथ।
करके राही मोक्ष के, बने श्री के नाथ।।

।। इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

विजय मेरु पूजा-2

स्थापना

दोहा - विजय मेरु के पूजते, हम सोलह जिन धाम।
करते हैं आह्वान हम, करके विशद प्रणाम।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्ब समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(मोतियादाम-छन्द)

चढ़ाते जिनपद में हम नीर, प्राप्त करने को भव का तीर।
पूजते तव पद हे भगवान !, प्राप्त हो जाए पद निर्वाण।।1।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्व. स्वाहा।

चढ़ाते नाथ ! चरण में गंध, कर्म का आश्रव करने बन्द।
पूजते तव पद हे भगवान !, प्राप्त हो जाए पद निर्वाण।।2।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः चदनं निर्व. स्वाहा।

चढ़ाएँ अक्षत हे जिनराज !, मिले हम को अक्षय स्वराज।
पूजते तव पद हे भगवान, प्राप्त हो जाए पद निर्वाण।।3।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्प से पूजा करें जिनेश, काम रुज होवे नाश विशेष।
पूजते तव पद हे भगवान !, प्राप्त हो जाए पद निर्वाण।।4।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

सुचरु ये चढ़ा रहे रसदार, क्षुधा रुज हो जाए अब क्षार।
पूजते तव पद हे भगवान !, प्राप्त हो जाए पद निर्वाण।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

दीप से अर्चा करते खास, मोह तम होवे पूर्ण विनाश।
पूजते तव पद हे भगवान !, प्राप्त हो जाए पद निर्वाण।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्व. स्वाहा।

धूप यह जला रहे भगवान, कर्म मेरे हों नाश प्रधान।
पूजते तव पद हे भगवान !, प्राप्त हो जाए पद निर्वाण।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: धूपं निर्व. स्वाहा।

चढ़ाएँ फल ये सरस अनूप, प्राप्त हो मुझको निज स्वरूप।
पूजते तव पद हे भगवान !, प्राप्त हो जाए पद निर्वाण।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: फलं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्य यह अर्पित करता आज, चरण में मिलकर सकल समाज।
पूजते तव पद हे भगवान !, प्राप्त हो जाए पद निर्वाण।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकी खंड द्वीपस्थ विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्यावली

दोहा - विजय मेरु के पूजते, सोलह श्री जिन धाम।
पुष्पांजलि करते यहाँ, करके विशद प्रणाम।।

।। द्वितीय कोष्ठोपरि पुष्पांजलि क्षिपेत् ।।

(चौपाई-छन्द)

पूर्व धातकी द्वीप में जानो, विजय मेरु पूरव दिश मानो।
भद्रशाल वन में जिन गाए, भव्य जीव जो पूज रचाए।।1।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि भद्रशाल वनस्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी द्वीप में जानो, विजय मेरु दक्षिण दिश मानो।
भद्रशाल वन में जिन गाए, भव्य जीव जो पूज रचाए।।2।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि भद्रशाल वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी द्वीप में जानो, विजय मेरु पश्चिम में मानो।
भद्रशाल वन में जिन गाए, भव्य जीव जो पूज रचाए।।3।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि भद्रशाल वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी द्वीप में जानो, विजय मेरु उत्तर में मानो।
भद्रशाल वन में जिन गाए, भव्य जीव जो पूज रचाए।।4।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि भद्रशाल वनस्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी द्वीप कहाए, विजय मेरु नन्दन वन पाए।
पूरव दिश जिनगृह जो गाए, उनके जिन हम पूज रचाए।।5।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि नंदन वनस्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी द्वीप कहाए, विजय मेरु नन्दन वन पाए।
दक्षिण दिश जिनगृह जो गाए, उनके जिन हम पूज रचाए।।6।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि नंदन वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी द्वीप कहाए, विजय मेरु नन्दन वन पाए।
पश्चिम दिश जिनगृह जो गाए, उनके जिन हम पूज रचाए।।7।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि नंदन वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी द्वीप कहाए, विजय मेरु नन्दन वन पाए।
उत्तर दिश जिनगृह जो गाए, उनके जिन हम पूज रचाए।।8।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि नंदन वनस्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

(शम्भू-छन्द)

पूर्व धातकी विजय मेरु के, पूर्व दिशा में शुभ मनहार।
सुमनस वन में जिनगृह पावन, जिन पद वन्दन बारम्बार।।9।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि सोमनस वनस्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी विजय मेरु के, दक्षिण दिश में अतिशयकार।
सुमनस वन में जिनगृह पावन, जिन पद वन्दन बारम्बार।।10।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि सोमनस वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी विजय मेरु के, पश्चिम दिश में विस्मयकार।
सुमनस वन में जिनगृह पावन, जिन पद वन्दन बारम्बार।।11।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि सोमनस वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी विजय मेरु के, उत्तर दिश में अपरम्पार।
सुमनस वन में जिनगृह पावन, जिन पद वन्दन बारम्बार।।12।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि सोमनस वनस्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी विजय मेरु के, पूर्व दिशा में है शुभकार।
पाण्डुक वन में जिनगृह पावन, जिन पद वन्दन बारम्बार।।13।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि पाण्डुक वनस्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी विजय मेरु के, दक्षिण दिश में अतिशयकार।
पाण्डुक वन में जिनगृह पावन, जिन पद वन्दन बारम्बार।।14।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि पाण्डुक वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी विजय मेरु के, पश्चिम दिश में अपरम्पार।
पाण्डुक वन में जिनगृह पावन, जिन पद वन्दन बारम्बार।।15।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि पाण्डुक वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी विजय मेरु के, उत्तर दिश में शुभ मनहार।
पाण्डुक वन में जिनगृह पावन, जिन पद वन्दन बारम्बार।।16।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि पाण्डुक वनस्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्व धातकी विजय मेरु के, चतुर्दिशा में आभावान।
चारों वन में सोलह जिनगृह, जिन का हम करते गुणगान।।17।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबन्धि षोडश जिनालय सर्व जिनबिम्बेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

1728 जिन प्रतिमा का पूर्णार्घ

चार वनों में मेरु विजय के, गाये सोलह श्री जिनधाम।
जिनमें सत्रह सौ अट्ठाइस, जिन बिम्बों पद विशद प्रणाम।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, अर्चा करते महति महान।
भक्ति भाव से श्री जिनवर का, आज यहाँ करते गुणगान।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय मध्य विराजमान एक सहस्र सप्तशताष्टाविंशति जिनप्रतिमाभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जाप्य मंत्र - ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यो नम:।

जयमाला

दोहा - विजय मेरु के जिन भवन, शास्वत जिन भगवान।
गाते हैं जयमाल हम, जिनकी यहाँ महान।।

(शम्भू-छन्द)

विजय मेरु है पूरव दिश में, खण्ड धातकी में आए।
जिसकी सुन्दरता के आगे, रवि भी फीका पड़ जाए।।
बहु रंगों की आभा वाला, शुभ मणियों से चमक रहा।
कर्मो से जो विजय दिलाने, मानो मेरू दमक रहा।।1।।
चार कहे वन इस मेरू पे, चउ दिश चैत्यालय सोहें।
प्रति चैत्यालय में प्रतिमाएँ, एक सौ आठ सु मन मोहें।।
जिनगृह की शोभा मनहारी, तोरण द्वारों युक्त कही।
वन्दन बार हार मालाएँ, घंटी झालर लटक रही।।2।।
जगह-जगह फानूश लगे हैं, दीपों की शुभ ज्योति जगे।
रत्न राशि शुभ देख देखकर, भवि जीवों का मोह भगे।।
वेदि अग्र शुभ रहा चँदोवा, जो भव्यों का मन मोहे।
घण्टा नॉद होय अतिशायी, श्रेष्ठ मनोहर जो सोहे।।3।।
चौंसठ चँवर ढुरें प्रभु आगे, ऊपर नीचे लहराएँ।
तीन लोक के स्वामी हैं जिन, क्षत्र त्रय यश फैलाएँ।।
मेरू सहस चुरासी योजन, ऊँचाई वाला जानो।
पाण्डुक शिला पे न्हवन प्रभू का, इन्द्र करें पावन मानो।।4।।

दोहा - मेरू के जिन धाम की, पूजा करते आज।
'विशद' भावना है यहीं, पाएँ शिव स्वराज।।

ॐ ह्रीं श्री विजय मेरु संबंधि षोडश जिनालय सर्व जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा - नाथ ! आपके द्वार पर, लाए हम अरदास।
पूरी हो मम कामना, लेकर आये आस ।।

।। इत्याशीर्वाद: ।।

अचल मेरु पूजा-3

स्थापना

दोहा - अचल मेरु में भी रहे, सोलह श्री जिनधाम।
आह्वानन् करते हृदय, करके विशद प्रणाम।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्ब समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

पूजा (दोहा-छन्द)

जला रही हमको प्रभो !, राग आग की पीर।
पाने जल लाए विशद, भेद ज्ञान का नीर।।1।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्व. स्वाहा।

शीतल चन्दन से मिटे, इस तन का संताप।
प्रभु भक्ती मैटे विशद, लगा कर्म का ताप।।2।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः चदनं निर्व. स्वाहा।

भव सिन्धू से शीघ्र ही, पार उतारो नाथ।
चढ़ा रहे अक्षत विशद, चरण झुकाते माथ !।।3।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्व. स्वाहा।

शील स्वभाव जगाइये, मदन दर्प अतिशूर।
भव तट नाव लगाइये, शिव पद से जो दूर।।4।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

शांत करो जिनराज हे, क्षुधा ज्वाला विकराल।
मिथ्या भ्रान्ती नाश हो, लाए चरु के थाल।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

स्व-पर तत्त्व प्रकाशनी, आतम ज्योति महान।
करो प्रज्वलित हे प्रभो !, अन्तर दीप सुज्ञान।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्व. स्वाहा।

भव-भव में भटके फिरे, कर्म बन्ध से नाथ !।
लोहे की संगति किए, अग्नि सहे घन घात।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्व. स्वाहा।

कर्मों से संग्राम कर, पाए पद निर्वाण।
मुक्ती फल पाने विशद, करते हम गुणगान।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्य चरण अर्पण करें, पद अनर्घ्य के हेतु।
श्रद्धा से पूजन करें, जिन भक्ती शिव सेतु।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकी खंड द्वीपस्थ अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्यावली

दोहा - अचल मेरु के पूजते, जिनगृह श्री जिनराज।
पुष्पांजलि करते प्रभो !, तारण तरण जहाज।।

।। तृतीय कोष्ठोपरि पुष्पांजलि क्षिपेत् ।।

(जोगीरासा-छन्द)

अपर धातकी अचल मेरु के, पूर्व दिशा में जाएँ।
भद्रशाल वन में जिनगृह जिन, पद में अर्घ्य चढ़ाएँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु के, दक्षिण दिश में जाएँ।
भद्रशाल वन में जिनगृह जिन, पद में अर्घ्य चढ़ाएँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु के, पश्चिम दिश में जाएँ।
भद्रशाल वन में जिनगृह जिन, पद में अर्घ्य चढ़ाएँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु के, उत्तर दिश में जाएँ।
भद्रशाल वन में जिनगृह जिन, पद में अर्घ्य चढ़ाएँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु के, नन्दन वन में भाई।
पूर्व दिशा में जिनगृह पावन, पूज रहे शिवदायी।।5।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु के, दक्षिण वन में भाई।
पूर्व दिशा में जिनगृह पावन, पूज रहे शिवदायी।।6।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु के, पश्चिम वन में भाई।
पूर्व दिशा में जिनगृह पावन, पूज रहे शिवदायी।।7।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु के, उत्तर वन में भाई।
पूर्व दिशा में जिनगृह पावन, पूज रहे शिवदायी।।8।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

(ज्ञानोदय-छन्द)

अपर धातकी अचल मेरु का, वन सुमनस शुभकारी।
पूर्व दिशा के जिनगृह पावन, जिन पद ढोक हमारी।।9।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि सोमनस वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु का, वन सुमनस शुभकारी।
दक्षिण दिश के जिनगृह पावन, जिन पद ढोक हमारी।।10।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि सोमनस वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु का, वन सुमनस शुभकारी।
पश्चिम दिश के जिनगृह पावन, जिन पद ढोक हमारी।।11।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि सोमनस वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु का, वन सुमनस शुभकारी।
उत्तर दिश के जिनगृह पावन, जिन पद ढोक हमारी।।12।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि सोमनस वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु में, पाण्डुक वन शुभ आएँ।
पूर्व दिशा में जिनगृह प्रतिमा, भविजन पूज रचाएँ।।13।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि पाण्डुक वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु में, पाण्डुक वन शुभ आएँ।
दक्षिण दिश में जिनगृह प्रतिमा, भविजन पूज रचाएँ।।14।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि पाण्डुक वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु में, पाण्डुक वन शुभ आएँ।
पश्चिम दिश में जिनगृह प्रतिमा, भविजन पूज रचाएँ।।15।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि पाण्डुक वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु में, पाण्डुक वन शुभ आएँ।
उत्तर दिश में जिनगृह प्रतिमा, भविजन पूज रचाएँ।।16।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि पाण्डुक वनस्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी अचल मेरु के, वन शुभ चार बताए।
चतुर्दिशा में जिनगृह जिनपद, भाव सहित सिरनाए।।17।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबन्धि षोडश जिनालय सर्व जिनबिम्बेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

1728 जिन प्रतिमा का पूर्णार्घ

चार वनों में मेरु अचल के, गाये सोलह श्री जिनधाम।
जिनमें सत्रह सौ अट्ठाइस, जिन बिम्बों पद विशद प्रणाम।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, अर्चा करते महति महान।
भक्ति भाव से श्री जिनवर का, आज यहाँ करते गुणगान।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय मध्य विराजमान एक सहस्र सप्तशताष्टाविंशति जिनप्रतिमाभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जाप्य मंत्र - ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यो नम:।

जयमाला

दोहा - द्वीप धातकी खण्ड के, अचल मेरु अभिराम।
जयमाला गाते विशद, उसमें जो जिन धाम।।

(पद्धरि-छन्द)

जय अचल मेरु शुभकर महान, ऋषिगण जिसका करते बखान।
जिस मेरू पे बन चार मान, जिनमें जिनगृह सोहे महान।।1।।
जिनबिम्ब एक सौ आठ मान, प्रति जिनगृह में सोहें प्रधान।
सुन्दर रत्नोंमय चमकदार, जिनबिम्बों से हों चमत्कार।।2।।
जिन दर्शन को सुर खचर जाँय, जिन दर्शन कर जो हर्ष पाँय।
सब देव देवियाँ गीत गाँय, कर नृत्य गान पूजा रचाँय।।3।।
घुंघरूँ की रुनझुन झनन झान, वीणा की बजती तनन तान।
सुर भांति-भांति बाजे बजाँय, प्रभु का उज्जल नाटक रचाँय।।4।।
प्रभु दर्शन कर सम्यक्त्व पाँय, जो भेद ज्ञान मन में जगाँय।
जिनका अति उत्तम पुण्य आँय, वह ही मेरू का दर्श पाँय।।5।।
प्रभुवर का यह अतिशय कहाय, सद् भव्य जीव जिन चरण आँय।
मेरू के व्रत हों तीन बार, पालें प्राणी विश्वास धार।।6।।
पुष्पांजलि व्रत भी करें जीव, जो पुण्य जगाते हैं अतीव।
जो गुरुवर का सानिध्य पाँय, गुरु भक्ती शुभ मन में जगाँय।।7।।
मेरू के जिन जो शीश नाँय, प्रभु प्रतिमा को मन में बसाँय।
प्रभु पूजा करते हैं परोक्ष, हम भी पाए प्रभु शीघ्र मोक्ष।।8।।

दोहा - अर्चा करते आपकी, विनय भाव के साथ।
'विशद' भावना पूर्ण हो, तीन लोक के नाथ !।।

ॐ ह्रीं श्री अचल मेरु संबंधि षोडश जिनालय सर्व जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा - अचल मेरु के पूजते , हम शुभ श्री जिनधाम।
अर्घ्य चढ़ाते भाव से, करते चरण प्रणाम।।

।। इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

श्री मंदर मेरु पूजा-4

स्थापना

दोहा - सोलह जिन गृह मेरु के, पूज रहे हैं आज।
मन्दर मेरू के यहाँ, पूजे सकल समाज।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्ब समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

पूजा (पद्धरि-छन्द)

प्रभु चढ़ा रहे हैं यहाँ नीर, अब जन्मादिक की मिटे पीर।
हम अर्चा करते यहाँ नाथ !, दो मोक्षमार्ग में हमें साथ।।1।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्व. स्वाहा।

हम चढ़ा रहे शुभ यहाँ गंध, हो कर्मास्रव अब शीघ्र बंद।
हम अर्चा करते यहाँ नाथ !, दो मोक्षमार्ग में हमें साथ।।2।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः चदनं निर्व. स्वाहा।

अक्षय अक्षत ये रहे श्वेत, पद पाएँ हम शुभ गुणोपेत।
हम अर्चा करते यहाँ नाथ !, दो मोक्षमार्ग में हमें साथ।।3।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्व. स्वाहा।

शुभ चढ़ा रहे हैं यहाँ फूल, अब काम रोग का नशे मूल।
हम अर्चा करते यहाँ नाथ !, दो मोक्षमार्ग में हमें साथ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

नैवेद्य चढ़ाते यहाँ आन, हो क्षुधा रोग की पूर्ण हान।
हम अर्चा करते यहाँ नाथ !, दो मोक्षमार्ग में हमें साथ।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

शुभ दीप जलाते यहाँ आज, अब नश जाए मम मोहराज।
हम अर्चा करते यहाँ नाथ !, दो मोक्षमार्ग में हमें साथ।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्व. स्वाहा।

प्रभु जला रहे हैं श्रेष्ठ धूप, हम पद पाएँ अतिशय अनूप।
हम अर्चा करते यहाँ नाथ !, दो मोक्षमार्ग में हमें साथ।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: धूपं निर्व. स्वाहा।

फल यहाँ चढ़ाते हैं विशेष, हम पाएँ शिवपद हे जिनेश !।
हम अर्चा करते यहाँ नाथ !, दो मोक्षमार्ग में हमें साथ।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: फलं निर्व. स्वाहा।

प्रभु चढ़ा रहे हैं यहाँ अर्घ्य, हो विशद प्राप्त हमको अनर्घ्य।
हम अर्चा करते यहाँ नाथ !, दो मोक्षमार्ग में हमें साथ।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय सर्व जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्यावली

दोहा - मन्दर मेरू के सुजिन, पूज रहे हम आज।
पुष्पांजलि करते चरण, पाने को शिवराज।।

।। चतुर्थ कोष्ठोपरि पुष्पांजलि क्षिपेत् ।।

(ताटंक-छन्द)

पुष्करार्ध पूरव के मंदर, मेरू में पूरव दिश जान।
भद्रशाल वन में जिनगृह जिन, बिम्बों के पद विशद प्रणाम।।1।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मंदर, मेरू में दक्षिण दिन मान।
भद्रशाल वन में जिनगृह जिन,बिम्बों के पद विशद प्रणाम।।2।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मंदर, मेरू में पश्चिम दिश जान।
भद्रशाल वन में जिनगृह जिन, बिम्बों के पद विशद प्रणाम।।3।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मंदर, मेरू में उत्तर दिश मान।
भद्रशाल वन में जिनगृह जिन, बिम्बों के पद विशद प्रणाम।।4।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मंदर, मेरू में नन्दन वन पाय।
पूर्व दिशा में जिनगृह जिन को, भविजन अतिशय पूज रचाय।।5।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मंदर, मेरू में नन्दन वन पाय।
दक्षिण दिश में जिनगृह जिन को, भविजन अतिशय पूज रचाय।।6।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मंदर, मेरू में नन्दन वन पाय।
पश्चिम दिश में जिनगृह जिन को, भविजन अतिशय पूज रचाय।।7।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मंदर, मेरू में नन्दन वन पाय।
उत्तर दिश में जिनगृह जिन को, भविजन अतिशय पूज रचाय।।8।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मेरू, सुमनश वन पूरव की ओर।
भव्य जीव जिन अर्चा करके, अतिशय होते भाव विभोर।।9।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि सोमनस वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मेरू, सुमनश वन दक्षिण की ओर।
भव्य जीव जिन अर्चा करके, अतिशय होते भाव विभोर।।10।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि सोमनस वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मेरू, सुमनश वन पश्चिम की ओर।
भव्य जीव जिन अर्चा करके, अतिशय होते भाव विभोर।।11।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि सोमनस वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मेरू, सुमनश वन उत्तर की ओर।
भव्य जीव जिन अर्चा करके, अतिशय होते भाव विभोर।।12।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि सोमनस वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मेरू, पाण्डुक वन पूरव दिश जान।
भव्य जीव जिनगृह जिन प्रतिमा, का अतिशय करते गुणगान।।13।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि पाण्डुक वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मेरू, पाण्डुक वन दक्षिण दिश जान।
भव्य जीव जिनगृह जिन प्रतिमा, का अतिशय करते गुणगान।।14।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि पाण्डुक वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मेरू, पाण्डुक वन पश्चिम दिश जान।
भव्य जीव जिनगृह जिन प्रतिमा, का अतिशय करते गुणगान।।15।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि पाण्डुक वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव के मेरू, पाण्डुक वन उत्तर दिश जान।
भव्य जीव जिनगृह जिन प्रतिमा, का अतिशय करते गुणगान।।16।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि पाण्डुक वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरव में चारों, वन में चारों दिश जिनधाम।
उनमें जो जिनबिम्ब विराजित, तिन पद बारम्बार प्रणाम।।17।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबन्धि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

1728 जिन प्रतिमा का पूर्णार्घ

चार वनों में मेरू मंदर, के गाये सोलह जिनधाम।
जिनमें सत्रह सौ अट्ठाइस, जिन बिम्बों पद विशद प्रणाम।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, अर्चा करते महति महान।
भक्ति भाव से श्री जिनवर का, आज यहाँ करते गुणगान।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय मध्य विराजमान एक सहस्र सप्तशताष्टाविंशति जिनप्रतिमाभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जाप्य मंत्र - ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यो नम:।

जयमाला

सोरठा - मन्दर मेरू नाम, पुष्करार्ध पूरव दिशा।
पूज रहे अभिराम, जयमाला गाके विशद।।

(अवतार-छन्द)

है मेरू मन्दर नाम महिमा गातें हैं,
जिसमें सोहें जिन धाम जिनको ध्यातें है।
यह पावन तीरथ धाम जिसका भजन करें,
जिन प्रतिमाएँ अभिराम जिनको नमन करें।।1।।
हैं वीतराग अविकार जिन के बिम्ब विमल,
जो हैं सुर नर से पूज्य कहते शास्त्र अमल।
है पाण्डु शिला शुभकार पाण्डुक वन भूपर,
हो जिनवर का अभिषेक पाण्डु शिला ऊपर।।2।।
वन इसमें सोहें चार सर्व मनोज्ञ रहे,
इक वन में जिनगृह चार अतिशय पूज्य कहे।
गजदन्त विदिश हैं चार जिनगृह शुभकारी,
भवि अष्ट द्रव्य ले हाथ पूजे शिवकारी ।।3।।
जिनवर की भक्ति रचाय मंगल वाद्य बजा,
जय जय बोलें हर्षाय वसु विधि द्रव्य सजा।
मेरू का अद्भुत रूप सबके मन भाए,
शास्वत है श्रेष्ठ अनूप शिव सुख दिलवाए।।4।।
जॅह मानस्तंभ विशेष कलशा ध्वज वाले,
सब चैत्यालय शुभकार जिनबिम्बों वाले।
हम पूज रहे जिनबिम्ब अविचल पद पाएँ,
यह छोड़ विशद संसार शिव पदवी पाएँ।।5।।

दोहा - मंदर मेरू के 'विशद', पूज रहे जिनधाम।
भाते हैं यह भावना, पाएँ मोक्ष ललाम।।

ॐ ह्रीं श्री मंदर मेरु संबंधि षोडश जिनालय सर्व जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा - जिन अर्चा करके मिले, हमको भी शिव द्वार।
भाते हैं यह भावना, पद पाएँ अविकार।।

।। इत्याशीर्वाद: ।।

श्री विद्युन्माली मेरु पूजा-5

स्थापना

दोहा - विद्युन्माली मेरु के, पूज रहे जिन धाम।
आह्वानन् करते हृदय, पाने आतमराम।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्ब समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

तर्ज - माता तू दया करके...

जिसको अपना माना, उसने संताप दिया।
यह समझ नहीं आया, फिर भी क्यों राग किया।।1।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: जलं निर्व. स्वाहा।

भव-भव में हे स्वामी !, हमने संताप सहा।
अब सहा नही जाए, प्रभु मैटो द्वेष महा।।2।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: चंदनं निर्व. स्वाहा।

तन धन परिजन जो हैं, सब नश्वर है माया।
जिस तन में रहते है, वह क्षण भंगुर भाया।।3।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अक्षतं निर्व. स्वाहा।

यह काम लुटेरा है, शास्वत गुण लूट रहा।
हम मौन खड़े निर्बल, ना हमसे छूट रहा।।4।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: पुष्पं निर्व. स्वाहा।

इस क्षुधा रोग से हम, सदियों से सताए हैं।
व्यंजन की औषधि खा, ना तृप्ती पाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

हम पर में खोए हैं, पर की महिमा गाई।
इस मोहबली ने प्रभु, निज की सुधि विसराई।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: दीपं निर्व. स्वाहा।

कर्मों की आंधी से, चेतन ग्रह बिखर गया।
तव दर्शन करके प्रभु, मम चेतन निखर गया।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: धूपं निर्व. स्वाहा।

प्रभु पाप बीज बोए, शिव फल कैसे पाएँ।
तव अर्चा करके हम, प्रभु सिद्धालय जाएँ।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: फलं निर्व. स्वाहा।

वसु कर्मों ने मिलकर, जग में भरमाया है।
अब शिव पद पाने को, यह अर्घ्य चढ़ाया है।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्यावली

दोहा - विद्युन्माली मेरु के, पावन श्री जिनधाम।
पुष्पांजलि कर पूजते, करके विशद प्रणाम।।

।। पंचम कोष्ठोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

(पद्धरि-छन्द)

जय पुष्करार्ध पश्चिम प्रधान, विद्युन्माली मेरू महान।
वन भद्रशाल पूरव विशेष, हम पूज रहे जिसके जिनेश।।1।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जय पुष्करार्ध पश्चिम कहाय, विद्युन्माली मेरू बताय।
वन भद्रशाल दक्षिण विशेष, हम पूज रहे जिसके जिनेश।।2।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

है पुष्करार्ध पश्चिम त्रिकाल, विद्युन्माली मेरू विशाल।
वन भद्रशाल पश्चिम विशेष, हम पूज रहे जिसके जिनेश।।3।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जय पुष्करार्ध पश्चिम प्रदेश, विद्युन्माली मेरू विशेष।
वन भद्रशाल उत्तर विशेष, हम पूज रहे जिसके जिनेश।।4।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि भद्रशाल वन स्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जय पुष्करार्ध पश्चिम प्रधान, विद्युन्माली मेरू महान।
नन्दन वन पूरव दिशा जान, हम पूज रहे जिनगृह महान।।5।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जय पुष्करार्ध पश्चिम प्रधान, विद्युन्माली मेरू महान।
नन्दन वन दक्षिण दिशा जान, हम पूज रहे जिन गृह महान।।6।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जय पुष्करार्ध पश्चिम प्रधान, विद्युन्माली मेरू महान।
नन्दन वन पश्चिम दिशा जान, हम पूज रहे जिन गृह महान।।7।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि नंदन वन स्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जय पुष्करार्ध पश्चिम प्रधान, विद्युन्माली मेरू महान।
नन्दन वन उत्तर दिशा जान, हम पूज रहे जिन गृह महान।।8।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि नंदन वनस्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी खण्ड द्वीप में, मेरू विद्युन्माली नाम।
सुमनस वन पूरव जिनगृह जिन, के पद बारम्बार प्रणाम।।9।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि सोमनस वनस्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी खण्ड द्वीप में, मेरू विद्युन्माली नाम।
सुमनस वन दक्षिण जिनगृह जिन, के पद बारम्बार प्रणाम।।10।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि सोमनस वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी खण्ड द्वीप में, मेरू विद्युन्माली नाम।
सुमनस वन पश्चिम जिनगृह जिन, के पद बारम्बार प्रणाम।।11।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि सोमनस वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी खण्ड द्वीप में, मेरू विद्युन्माली नाम।
सुमनस वन उत्तर जिनगृह जिन, के पद बारम्बार प्रणाम।।12।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि सोमनस वनस्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी खण्ड द्वीप में, मेरू विद्युन्माली नाम।
पाण्डुक वन पूरव दिश में जिन, के पद बारम्बार प्रणाम।।13।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि पाण्डुक वनस्थित पूर्वदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी खण्ड द्वीप में, मेरू विद्युन्माली नाम।
पाण्डुक वन दक्षिण दिश में जिन, के पद बारम्बार प्रणाम।।14।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि पाण्डुक वनस्थित दक्षिणदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी खण्ड द्वीप में, मेरू विद्युन्माली नाम।
पाण्डुक वन पश्चिम दिश में जिन, के पद बारम्बार प्रणाम।।15।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि पाण्डुक वनस्थित पश्चिमदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी खण्ड द्वीप में, मेरू विद्युन्माली नाम।
पाण्डुक वन उत्तर दिश में जिन, के पद बारम्बार प्रणाम।।16।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि पाण्डुक वनस्थित उत्तरदिक् जिनालय जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अपर धातकी द्वीप मेरु के, चतुर्दिशा में वन हैं चार।
उनमें जो जिनगृह जिनवर हैं, जिन पद वन्दन बारम्बार।।17।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबन्धि षोडश जिनालय सर्व जिनबिम्बेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

1728 जिन प्रतिमा का पूर्णार्घ

चार वनों में मेरू विद्युन्माली, के गाये सोलह जिनधाम।
जिनमें सत्रह सौ अट्ठाइस, जिनबिम्बों पद विशद प्रणाम।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, अर्चा करते महति महान।
भक्ति भाव से श्री जिनवर का, आज यहाँ करते गुणगान।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय मध्य विराजमान एक सहस्र सप्तशताष्टाविंशति जिनप्रतिमाभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जाप्य मंत्र - ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि अशीति जिनालय जिनबिम्बेभ्यो नम:।

जयमाला

दोहा - सोलह श्री जिन धाम हैं, शास्वत पूज्य त्रिकाल।
विद्युन्माली मेरु की, गाते हम जयमाल।।

(छन्द-जोगीरासा)

विद्युन्माली मेरू की शुभ, जयमाला हम गाते।
उसमें चैत्यालय प्रतिमाओं, को हम शीश झुकाते।।
जिन चैत्यालय के कारण यह, पर्वत पूजे जाते।
सुर नर किन्नर श्री जिनेन्द्र की, भक्ती श्रेष्ठ रचाते।।1।।
अतिशयकारी मेरु शिखर का, कण-कण पावन जानो।
चार शिलाएँ पाण्डुक वन की, चार दिशा में मानो।।
वसु योजन इनकी ऊँचाई, सौ योजन लम्बाई।
है पचास योजन चौड़ाई, सब समान हैं भाई।।2।।
सिंहासन है तीन शिला पे, धनुष पाँच सौ जानो।
ऊँचाई चौड़ाई सम है, रत्नमयी शुभ मानो।।
पाण्डुक वन में मेरू गिरि पे, सुर गण प्रभु को लाते।
भक्ति भाव से जिन बालक का, शुभ अभिषेक कराते।।3।।
कर्मभूमि के नर नारी भी, मेरू गिरि पे जाते।
अर्चा करके श्री जिनवर की, मन वांछित फल पाते।।
सप्तच्छद चम्पक आदिक तरु, चार वनों में सोहें।
पशु पक्षी गण मधुर स्वरों में, क्रीड़ा कर मन मोहें।।4।।

दोहा - अर्चा करते आपकी, विनय भाव के साथ।
'विशद' भावना पूर्ण हो, तीन लोक के नाथ !।।

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्माली मेरु संबंधि षोडश जिनालय सर्व जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा - श्री जिन की अर्चा करें, भक्ति भाव के साथ।
शिव पद पाने के लिए, झुका चरण में माथ।।

।। इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

जाप्य मंत्र - ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधि षोडश जिनालय जिनबिम्बेभ्यो नमः।

समुच्चय जयमाला

दोहा - सुर नर मुनि जिनके चरण, वन्दन करें त्रिकाल।
शास्वत पाँचों मेरु की, गाते हैं जयमाल।।

(गीता-छन्द)

मेरू सुगिरि के चार वन में, जो बने शिवधाम है।
उनमें विराजित जिन प्रभू को, बार-बार प्रणाम है।।
जिनगृह सुसज्जित और सुन्दर, मन सभी के भावते।
जो वन्दना करते चरण की, शिव मही वे पावते।।1।।
इन मंदिरों के द्वार बजती, हैं विशद शहनाइयाँ।
कई देव विद्याद्यर चरण में, गा रहे हैं बधाइयाँ।।
बाजे बजाते जो अनेकों, पूजते जिन के चरण।
हो लीन भक्ती में सतत्, उत्सव करें नित देवगण।।2।।
जो भक्ति में आनन्द मिलता, वह नहीं संसार में।
सद् भक्त कर जिन भक्ति पावें, सौख्य जा शिव द्वार में।।
आनन्द है जिन भक्ति में या, जिन प्रभू के ध्यान में।
आनन्द कोई कह सके ना, आए प्रभू के ज्ञान में।।3।।
जिन गेह में सोने रजत व, रत्न के चित्रण बने।
शुभ रत्न मय रंगावली से, चौक शोभित हैं घने।।
है रत्नमय नक्कासि जिनमें, सुन्दर कपाट विशाल हैं।
अनुपम सुवासित जिन सदन नित, पूजनीय त्रिकाल हैं।।4।।
अतिभव्य वैभव युक्त जिनगृह, का कथन कैसे करें।
जिन शास्त्र में पढ़के विशद ये, मन नहीं मेरे भरें।।
आकाश में उड़ती ध्वजाएँ, कह रहीं आओ सभी।
जिन देव की अर्चा बिना पल , एक ना जाए कभी।।5।।
हम नित्य प्रमुदित भाव से , जिन के चरण वन्दन करें।
शुभ प्राप्त करने बोधि पावन, नाथ ! का अर्चन करें।।
आये प्रभू तव द्वार पर , भव ताप अब हर लीजिए।
जब तक ना मुक्ती प्राप्त हो, प्रभु दर्श हमको दीजिए।।6।।

दोहा - पंच मेरु में जो रहे, शास्वत श्री जिन धाम।
उनमें जो जिनबिम्ब हैं, तिन पद 'विशद' प्रणाम।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु संबंधि अशीति जिनालय जिनबिम्बेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.स्वाहा।

दोहा - जिनवर का हमने किया, भाव सहित गुणगान।
जिसका फल हमको मिले, ''विशद'' शीघ्र निर्वाण।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

श्री पंचमेरू पूजा - संस्कृत

स्थापना

संवोषडाहूय-निवेश्यठाभ्यां, सानिध्य-मानीय वषट् पदेन।
श्री पंच मेरुस्थ जिनालयानां, यजाम्यशीते:प्रतिमाः समस्ताः।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्ब समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

स्वः सिन्धु मुख्याखिल तीर्थ सार्थां, वुभिः शुभांभोज रजोभिरामैः।
आद्यः सुदर्शनोर्विजयश्वाचलस्तथा, चतुर्थ विद्युन्माली सुपंचमा।। 1।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

कर्पूर पूर स्फुरदत्पदार, सौरभ्य सारैर् हरि चन्दनाद्यै।
श्री पंच मेरुस्थ जिनालयानां, यजाम्यशीतेः प्रतिमाः समस्तः।।2।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्व. स्वाहा।

प्रधान संतानक मुख्य पुष्पैः, सुगन्धिता गच्छद तुच्छ भृंगैः।
श्री पंच मेरुस्थ जिनालयानां, यजाम्यशीतेः प्रतिमाः समस्तः।।3।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

शाल्याक्षतैः कैरव कुण्डलानां, गुण त्रयेण भ्रम-मावहद्भि।
श्री पंच मेरुस्थ जिनालयानां, यजाम्यशीतेः प्रतिमाः समस्तः।।4।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

सद्यस्तनैः क्षीर घृतेक्षु मुख्यै, सद्रव्य भव्यैश्चरुभि सुगंधैः।
श्री पंच मेरुस्थ जिनालयानां, यजाम्यशीतेः प्रतिमाः समस्तः।।5।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

तमो विनाश प्रकटी कृतार्थैद्, दीपै-रशेषज्ञ वचोनुरूपैः।
श्री पंच मेरुस्थ जिनालयानां, यजाम्यशीतेः प्रतिमाः समस्तः।।6।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्व. स्वाहा।

स्वपाप रक्षा परिणाश धूम्रै-रिवोरु-कृष्णागुरु धूप धूम्रैः।
श्री पंच मेरुस्थ जिनालयानां, यजाम्यशीतेः प्रतिमाः समस्तः।।7।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं निर्व. स्वाहा।

नारंग मुख्याखिल वृक्ष पक्व, फलैः सुगन्धैः सुरसैः सुवर्णैः।
श्री पंच मेरुस्थ जिनालयानां, यजाम्यशीतेः प्रतिमाः समस्तः।।8।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्व. स्वाहा।

वार्गन्ध पुष्पाक्षत दीप धूपैः, नैवेद्य दूर्वा फलवद्भि-रर्घ्यैः।
श्री पंच मेरुस्थ जिनालयानां, यजाम्यशीतेः प्रतिमाः समस्तः।।9।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पुष्पांजलि के अर्घ्य

अनेक विधिना सारं, तीर्थेश पदकारणं।
भक्ति सम्पद्यते भव्यै,प्रीणितं परमेश्वरैः।।

।। मण्डलस्यो परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

।। बसन्त तिलिका-छन्द ।।

'मेरु सुदर्शन' गृहं परमं पवित्रं।
प्रोत्तारयामि वर- मर्घ-महं जलाद्यै।।
पूर्ण सुवर्ण कृत भाजन संस्थितं च।
स्वर्गापवर्ग फलदं जय घोषणैश्च।।1।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन मेरु स्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सम्यक्त्व शुद्धि परितं हृदयं नरो यो।
भक्त्या यजे 'विजय मेरु' जिनालयं च।।
स्वर्गापवर्ग फलदं जिनबिम्ब पूजां।
यस्मान् नराः सुख करं फलमाप्नुवन्ति।।2।।

ॐ ह्रीं विजय मेरु स्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सद्वारि चन्दन शुभाक्षत पुण्यापुष्पैर्।
नैवेद्यरत्न वरदीप सुधूप पूगैः।।
अर्घ्यं ददाति अचलोपरि जैन गेहं।
मेरोः 'अचल' जिनगृहं प्रणमामि भक्त्या।।3।।

ॐ ह्रीं अचल मेरु स्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

'मेरु सुमन्दर' गिरिं जैनेन्द्र विम्बान।
अर्चाम्यहं प्रवर भक्ति भरेण युक्ता।।
अर्घ्येण सुसज्जल सुचन्दन पुष्पचारु।
नैवेद्य दीप वर धूप फलै कृतेन।। 4।।

ॐ ह्रीं मन्दर मेरु स्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

श्री मद् गणाधिपतयो यतयो मुनीशाः।
सत् साधवो विबुध वृन्द विवन्द्यधीशाः।।
मेरु गिरिं 'सुविद्युन्मालि' जिनेन्द्र गेहा।
क्षेमं दिशन्तु यजते भजते गिरीशः।। 5।।

ॐ ह्रीं विन्द्युमाली मेरु स्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

नीरादि चन्दन सदक्षत पुष्प चारु।
नैवेद्य दीप वर धूप फलैर् महार्घ्यं।।
मेरुस्थ पंच गिर्योपरि जैन गेहं।
सम्पूजयामि 'विशदं' त्रैयोग शुद्ध्या।।

ॐ ह्रीं पंच मेरु स्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

जिन मज्जन पीठं, मुनिगण ईठं, असी चैत्य मंदिर सहितं।
वन्दौं गिरि नायक, महिमा लायक, पंचमेरु तीरथ महितं।। 1।।

चौपाई

जम्बूद्वीप अधिकच्छवि छाजै, मेरु सुदर्शन मध्य विराजै।
उन्नत जोजन लक्ष प्रमाणं, छत्रोपम सिर रजुक विमानं।। 2।।
दीप धातुकी खण्ड मझारै, मेरु युग्म आगम अनुसारै।
विजय नाम पूरव दिश सोहे, पश्चिम भाग अचल मन मोहे।। 3।।
पुष्करार्ध में भी पुनि यौंही, मंदिर विद्युन्माली त्यों ही।
च्यारों की इकसार ऊँचाई, सहस असी चौ योजन गाई।। 4।।
पाँचों मेरु महागिर एही, अचल अनादी धन थिर जेही।
मूल वज्रमधि मणिमय भाषे, ऊपरि कनक मई तम नाशे।। 5।।
गिर-गिरिप्रति वन चार बखाने, वन-वन देवल च्यार रवाने।
चामीकरमय चउ दिश राजे, रत्नमयी ज्योति रवि लाजै।। 6।।
समवशरण रचना शुभ धारै, ध्वज वानन सौं पाप विडारे।
सौ योजन आयाम गणीजे, व्यास तासतैं अर्ध्य भणीजे।। 7।।

तुंग पौंन सौ योजन भाजे, भद्रशाल के जिनगृह साजे।
ऊपर अर्ध्य-अर्ध्य सब जानो, पाण्डुक वन पर्यंत प्रमाणो।। 8।।
पाँचों मेरुन का सुन लीजे, सुन वरणन सरधा यह कीजे।
शोभा वरणत पारण लहिए, बुध बोधी कैसे करि कहिए।। 9।।
बिम्ब अठोत्तर सौ जिनमाही, रतन मई देखत दुख जांहीं।
आनन ज्यों अरु विन्दल से हैं, लक्षन विंजन सह तह से हैं।। 10।।
तीन पीठ पर सोहत ऐसे, जग सिर सिद्ध विराजत जैसे।
पद्मासन वैराग्य बढ़ावैं, सुर विद्याधर पूजन आवैं।। 11।।
महिमा कौन कहे जिन केरी, त्रिभुवन नैनानंद जिनेरी।
धनुष पाँच सौ तन चित् चोरै वंदौं भाव सहित कर जोरै।। 12।।
गजदन्तादि शिखर पर के हैं, कृत्रिम अकृत्रिम जिन गेहैं।
अरु त्रिभुवन में प्रतिमासारी, तिन प्रति धौक त्रिकाल हमारी।। 13।।

घत्ता-छन्द

भूधर पति जेहा, कर्मन येहा, भक्ति विषैदिढ भव्य जनौ।
कर पूजासारी, अष्ट प्रकारी, पंचमेरु जयमाल भणौ।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अशीति जिनालय जिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कमल वकुल मालोत्फुल्ल कल्हार मल्ली।
कुमुद कुरव कोद्यद्यूथिका केतकीनाम्।।
मरुव कदमनानां मालती चम्पकानाम्।
जिन चरण पुरस्ता-दंजलिं प्रोत्क्षिपामि।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

परम पूज्य आचार्य 108 श्री विशद सागर जी महाराज का अर्घ

पञ्चाचार परायणः सुमुनयाः रत्नत्रयाराधकाः।
द्वादश तप त्रय गुप्ति गोपन पराः दश धर्म संराधकाः।।
समता वन्दन स्तुति प्रतिक्रमण, स्वाध्याय ध्यानः पराः।
आचार्यं त्रय लोक पूजित पदं, वन्दे विशदसागरम्।।

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पंचमेरु पूजा (पुष्पांजलि पूजा)

सुदर्शन मेरु-1

स्थापना

जिनान्संस्थापयाम्यत्राह्वाननादि विधानतः।
सुदर्शन-भवान्-पुष्पांजलि-व्रत-विशुद्धये।।

अर्थ - पुष्पांजलि व्रत की शुद्धि के लिए आह्वानन आदि विधि के साथ सुदर्शन मेरु पर स्थित जिन प्रतिमाओं की स्थापना करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थ-जिनप्रतिमा-समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(रथोद्धता छन्द)

स्वर्धुनी-जल-निर्मल-धारया, विशन-कान्ति-निशाकर भारया।
प्रथम-मेरु-सुदर्शन-दिक्स्थितान्, यजत षोडश-नित्य-जिनालयान्।।1।।

अर्थ - चन्द्रमा की स्वच्छ किरणों के समान गंगाजल की निर्मल धारा से प्रथम सुदर्शनमेरुसम्बन्धि चारों दिशाओं के सोलह जिनालयों की नित्य पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलय-चन्दन-मर्दित-सद्द्रवैः, सुरभि-कुङ्कुम-सौरभ-मिश्रितैः।
प्रथम मेरु सुदर्शन-दिक्स्थितान्, यजत षोडश-नित्य-जिनालयान्।।2।।

अर्थ - सुगन्धित कुङ्कुम के सौरभ से मिश्रित घिसे हुए मलयागिरि के चन्दन के जल से प्रथम सुदर्शन मेरु सम्बन्धी चारों दिशाओं के सोलह जिनालयों की प्रतिदिन पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अशकलै-रमलैः शुभ-शालिजैरि-विधुकरोज्ज्वल-कान्तिभिरक्षतैः।
प्रथम मेरु सुदर्शन-दिक्स्थितान्, यजत षोडश-नित्य-जिनालयान्।।3।।

अर्थ - अखंड, निर्मल और चन्द्रमा की किरणों के समान धवल शालि के अक्षतों से प्रथम सुदर्शन मेरु सम्बन्धी चारों दिशाओं के सोलह जिनालयों की पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

अमरपुष्प-सुवारिज-चम्पकैर्वकुल-मालति-केतकि-सम्भवैः।
प्रथम मेरु सुदर्शन-दिक्स्थितान्, यजत षोडश-नित्य-जिनालयान्।।4।।

अर्थ - कल्पवृक्ष, कमल, चम्पा, वकुल, मालती और केतकी के सुन्दर पुष्पों से प्रथम सुदर्शन मेरु सम्बन्धी चारों दिशाओं के सोलह जिनालयों की नित्य पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृतवरादि-सुगन्ध-चरुत्करैः, कनक-पात्रचितैर्रचनाप्रियैः।
प्रथम मेरु सुदर्शन-दिक्स्थितान्, यजत षोडश-नित्य-जिनालयान्।।5।।

अर्थ - सोने के बर्तन में रखे हुए और उत्तम स्वाद वाले उत्तम घी के सुगन्धित पकवानों से प्रथम सुदर्शन मेरु सम्बन्धी चारों दिशाओं के सोलह जिनालयों की नित्य पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि - घृतादि - नवैर्वरदीपकैस्तरल - दीप्ति - विरोचित - दिग्गणैः।
प्रथम मेरु सुदर्शन-दिक्स्थितान्, यजत षोडश-नित्य-जिनालयान्।।6।।

अर्थ - चारों ओर प्रकाश करने वाले तथा चंचल ज्योति वाले मणि और घी के नये दीपकों से प्रथम सुदर्शन मेरु सम्बन्धी चारों दिशाओं के सोलह जिनालयों की नित्य पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगुरु-देवतरुद्भव-धूपकैः, परिमलोद्गम-धूपित-विष्टपैः।
प्रथम मेरु सुदर्शन-दिक्स्थितान्, यजत षोडश-नित्य-जिनालयान्।।7।।

अर्थ - अपनी सुगन्ध से संसार को सुगन्धित करने वाली ऐसी अगुरु और हरि चन्दन की धूप से प्रथम सुदर्शन मेरु सम्बन्धी चारों दिशाओं के सोलह जिनालयों की नित्य पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रमुक-दाडिम-निम्बुक सत्फलैः, प्रमुख पक्व फलैः सरसोत्तमैः।
प्रथम मेरु सुदर्शन-दिक्स्थितान्, यजत षोडश-नित्य-जिनालयान्।।8।।

अर्थ - सुन्दर, सरस और पके हुए सुपारी, अनार और नींबू आदि फलों से प्रथम सुदर्शन मेरु सम्बन्धी चारों दिशाओं के सोलह जिनालयों की नित्य पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

(मालनी छन्द)

विमल-सलिल-धारा-शुभ्र-गन्धाक्षतौघैः
कुसुम-निकर-चारु-स्वेष्ट-नैवेद्य-वर्गैः।
प्रहत-तिमिर-दीपैर्धूप-धूम्रैः फलैश्च
रजत-रजितमर्घं रत्नचन्द्रो भजेऽहम्।।7।।

मैं निर्मल जल की धारा, शुभ चन्दन, स्वच्छ अक्षत, सुन्दर फूल, रुचिकर और अपने लिए इष्ट नैवेद्य, अन्धकार को नष्ट करने वाले दीपक, जलती हुई धूप तथा फलों से चाँदी के पात्र में अर्घ बनाकर मेरु सम्बन्धी जिनालयों की पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धिपूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

जम्बूद्वीप धरा स्थितस्य सुमहोमेरोश्च पूर्वादिषु
दिग्भागेषु चतुर्षु षोडश-महाचैत्यालये सद्वनैः।
नाना-क्ष्माज-विभूषितैर्मणिमयैर्भद्रादिशालास्तकैः
संयुक्तस्य निवासिनो जिनवरान् भक्त्या स्तवीमि स्तवैः।

जम्बूद्वीप में स्थित जिस महान सुमेरु पर्वत की पूर्व आदि चारों दिशाओं में भद्रशाल आदि चार बन अनेक पृथ्वी से उत्पन्न हुए वृक्षों से सुशोभित हैं उस पर्वत सम्बन्धी सोलह महा जिनालयों में स्थित जिन प्रतिमाओं की भक्ति पूर्वक अनेक स्तोत्रों से मैं स्तुति करता हूँ।

जन्मदूरा नता देवकैनिष्कलाः, स्वेदवीताः सदा क्षीर-देहाकुलाः।
मेरु-संबन्धिनो वीतरागा जिनाः, सन्तु भव्योपकाराय संपूजिताः।।

जन्म-मरण से रहित, देवताओं से नमस्कृत, निर्दोष, स्वेद रहित, दूध के समान देह वाले तथा सबके द्वारा पूजित प्रथम मेरु सम्बन्धी वीतराग जिनेन्द्र भव्यों के उपकार के लिए हों।

शुद्ध-वर्णाङ्किताः शुद्ध-भावोद्धरा, रत्न-वर्णोज्ज्वलाः सद्गुणैर्निर्भराः।
मेरु-संबन्धिनो वीतरागा जिनाः, सन्तु भव्योपकाराय संपूजिताः।।

शुद्ध वर्ण से अंकित शुद्ध भाव को धारण करने वाले, रत्नों के वर्णों के समान उज्ज्वल, समीचीन गुणों से परिपूर्ण तथा सबके द्वारा पूजित प्रथम मेरु सम्बन्धी वीतराग जिनेन्द्र भव्यों के उपकार के लिए हों।

मान-मायातिगामुक्ति-भावोद्धराः, शुद्धि-सद्बोध-शङ्कादि-दोषाहराः।
मेरु-संबन्धिनो वीतरागा जिनाः, सन्तु भव्योपकाराय संपूजिताः।।

मान और माया से रहित, मुक्ति सम्बन्धी भावों से परिपूर्ण, विशुद्ध केवल ज्ञान से शंकादि दोषों को नष्ट करने वाले और भले प्रकार से पूजित प्रथम मेरु सम्बन्धी वीतराग जिनेन्द्र भव्यों के उपकार के लिए हों।

क्षुत्तृषामोहकक्षेषु दावानलाः, प्रोल्लसद्बोधदीपाः सुधांशूत्करः।
मेरु-संबन्धिनो वीतरागा जिनाः, सन्तु भव्योपकाराय संपूजिताः।।

क्षुधा, तृषा, और मोह रूपी अरण्य को दावानल के समान हैं, जिनमें बोध दीप प्रज्ज्वलित हुआ है और जो अमृत किरणों के समान हैं वे प्रथम मेरु सम्बन्धी वीतराग जिनेन्द्र भव्यों के उपकार के लिए हों।

पूर्ण-चन्द्राभ-तेजोभिनिवेशकाः, चन्द्र-सूर्य-प्रतापाः करावेशकाः।
मेरु-संबन्धिनो वीतरागा जिनाः, सन्तु भव्योपकाराय संपूजिताः।।

पूर्ण चन्द्रमा के समान कान्ति को धारण करने वाले, चन्द्र-सूर्य के समान प्रतापी, तेजवी तथा भले प्रकार पूजित प्रथम मेरु सम्बधी वीतराग जिनेन्द्र भव्यों के उपकार के लिए हों।

इति-रचित-फलौघाः प्राप्त-सुज्ञान-पारा
हत - तम - घन - पापा नम्र - सर्वामरेन्द्राः।
गत निखिल-विलापाः कान्दि-दीप्ता जिनेन्द्राः
अपगत-घन-मोहाः सन्तु सिद्ध्यै जिनेन्द्रा।।

इस प्रकार स्वर्ग-मोक्षादि फलों को देने वाले सर्वज्ञ, गहन पाप को नाश करने वाले, देव और इन्द्रों से पूज्य विलाप आदि समस्त दोषों से रहित और कान्तिमान वीतराग जिनेन्द्र सबकी सिद्धि के कारण हों।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु-सम्बन्धि-भद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धिपूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थ-जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व-व्रताधिपं सारं, सर्व-सौख्यकरं सताम्।
पुष्पांजलिव्रतं पुष्पाद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियम्।।

सभी व्रतों में मुख्य सारभूत और सज्जन पुरुषों को सब प्रकार का सुख देने वाला यह पुष्पांजलिव्रत तुम लोगों की अविनश्वर लक्ष्मी को पुष्ट करे।

(इत्याशीर्वादः)

विजय मेरु-2

जिनान्संस्थापयाम्यत्राह्वाननादि विधानतः।
धातकीखण्ड-पूर्वाशा-मेरोर्विजय-वर्तिनः।।

अर्थ - धातकी खण्ड की पूर्व दिशा में स्थित विजयमेरु सम्बंधी जिनेन्द्रों की आह्वानन् आदि विधान से मैं स्थापना करता हूँ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(इन्द्रवज्रा छन्द)

सुतोयैः सुतीर्थोद्भवैर्वीतदोषः, सुगाङ्गेय-भृङ्गारनालास्यसङ्गैः।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातकीस्थं, यजे रत्न-बिम्बोज्ज्वलं रत्नचन्द्रः।।1।।

अर्थ - श्रेष्ठ तीर्थ के दोषरहित सुन्दर जल से तथा गङ्गा के जल से भरी हुई निर्मल झारी से धातकी खण्ड में स्थित द्वितीय मेरु सम्बन्धी रत्नमयी सुन्दर बिम्बों की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुगन्धगतालि-व्रजैः कुङ्कु मादि-द्रवैश्चन्दनैश्चन्द्रपूर्णाभिरामैः।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातकीस्थं, यजे रत्न-बिम्बोज्ज्वलं रत्नचन्द्रः।।2।।

अर्थ - सुगन्ध से आकर मँडराते हुए भ्रमरों से युक्त तथा पूर्ण चन्द्रमा के समान अभिराम ऐसे केशर और चन्दन के द्रव से धातकी खण्डस्थ द्वितीय मेरु सम्बन्धी रत्नमयी उज्ज्वल जिन-प्रतिमाओं की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

सुशाल्यक्षतैरक्षतैर्दिव्य-देहैः, सुगन्धाक्षतारब्ध-भृंगार-गानैः।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातकीस्थं, यजे रत्न-बिम्बोज्ज्वलं रत्नचन्द्रः।।3।।

अर्थ - सुगन्ध से आकर गुंजार करते हुए भ्रमरों से युक्त अखण्ड शालि धान्य के सुन्दर अक्षतों से धातकी खण्डस्थ द्वितीय मेरु सम्बन्धी रत्नमयी उज्ज्वल जिन-प्रतिमाओं की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

लवङ्गैः प्रसूनैस्ततामोदवद्भिः, सुमन्दार-माला-पयोजादि-जातैः।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातकीस्थं, यजे रत्न-बिम्बोज्ज्वलं रत्नचन्द्रः।।4।।

अर्थ - खूब महकने वाले लौंग, मन्दार माला और कमल आदि फूलों से धातकी खण्डस्थ द्वितीय मेरु सम्बन्धी रत्नमयी उज्ज्वल जिन-प्रतिमाओं की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मनोज्ञैः सुखाद्यैर्गवीनाज्यतप्तै, सुशाल्योदनैर्मोदकैर्भण्डकाद्यैः।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातकीस्थं, यजे रत्न-बिम्बोज्ज्वलं रत्नचन्द्रः।।5।।

अर्थ - गाय के घी में उत्तम शाली के चावलों से बनाये गये लड्डू और माँड आदि स्वादिष्ट खाद्य पदार्थों से धातकी खण्डस्थ द्वितीय मेरु सम्बन्धी रत्नमयी उज्ज्वल जिन-प्रतिमाओं की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रदीपैर्हते-ध्वान्त-रत्नादि-,भूतैर्ज्वलत्कीलजातैर्भृशं भासुरैश्च।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातकीस्थं, यजे रत्न-बिम्बोज्ज्वलं रत्नचन्द्रः।।6।।

अर्थ - प्रज्ज्वलित हुई लौ से अत्यन्त दैदीप्यमान और अन्धकार से नष्ट करने वाले रत्नमयी दीपकों से धातकी खण्डस्थ द्वितीय मेरु सम्बन्धी रत्नमयी उज्ज्वल जिन-प्रतिमाओं की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुधूपैः सुगन्धीकृताशा-समूहैर्-भमद्भृंगयूथैः शुभैश्चन्दनाद्यैः।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातकीस्थं, यजे रत्न-बिम्बोज्ज्वलं रत्नचन्द्रः।।7।।

अर्थ - मँढराते हुए भौंरों से युक्त दसों दिशाओं को सुगन्धित करने वाली बढ़िया चन्दनादि की धूप से धातकी खण्डस्थ द्वितीय मेरु सम्बन्धी रत्नमयी उज्ज्वल जिन-प्रतिमाओं की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभैर्मोचिचोचाम्र-जम्बीर-काद्यैर्मनोऽभीष्ट-दानप्रदैः सत्फलाद्यैः।
द्वितीयं सुमेरुं शुभं धातकीस्थं, यजे रत्न-बिम्बोज्ज्वलं रत्नचन्द्रः।।8।।

अर्थ - मन को अत्यन्त रुचिकर केला, नारियल, आम और नींबू आदि उत्तम फलों से धातकी खण्डस्थ द्वितीय मेरु सम्बन्धी रत्नमयी उज्ज्वल जिन-प्रतिमाओं की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

विशुद्धैरष्टसद्द्रव्यैर-र्घ्यमुत्तारयाम्यहम्।
हेम-पात्र-स्थितैर्भक्त्या, जिनानां विजयौकसाम्।।9।।

अर्थ - सोने के पात्र में रखकर विशुद्ध आठ द्रव्यों से द्वितीय विजय मेरु सम्बन्धी जिन प्रतिमाओं का अर्घावतरण करता हूँ।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

सकल-कलिल-मुक्ताः सर्व संपत्ति-युक्ता
गणधर-गण-सेव्याः कर्म-पङ्क:प्रणष्टाः।
प्रहत-मदन-मानास्त्यक्त-मिथ्यात्व-पाशाः
कलित-निखिल-भावास्ते जिनेन्द्रा जयंतु।।1।।

अर्थ-सब पापों से रहित, अन्तरंग और बहिरंग लक्ष्मी से युक्त, गणधरों द्वारा सेवित, कर्मरूपी कीचड़ को धोने वाले, काम और मान की ध्वस्त करने वाले, मिथ्यात्व के बन्धन से रहित और सभी पदार्थों को साक्षात् करने वाले वे अर्थात् द्वितीय मेरु सम्बन्धी जिनेन्द्र जयवंत हो।

(चौपाई)

विमोह विमारित-काम-भुजंग, अनेक-सवाविधि-भाषित-भंग।
कषाय-दवानल-तत्त्व-सुरंग, प्रसीद जिनोत्तम मुक्ति-सुसंग।।2।।

अर्थ - हे मोह रहित, कामरूपी सर्प को नष्ट करने वाले, विवक्षावश सदा अनेक प्रकार का उपदेश करने वाले और कषाय रूपी दावानल के लिए जल के समान उत्तम वर्ण वाले मुक्ति में स्थित जिनेन्द्र देव हम पर प्रसन्न हों।

निरीह निरामय निर्मल हंस, प्रकीर्णक-राजित शुद्ध सुवंश।
अनिन्द्य-चरित्र विमानित-कंस, प्रसीद जिनोत्तम भव्य-निरंश।।3।।

अर्थ-हे निष्काम, नीरोग, निर्दोष, श्रेष्ठ, प्रकीणकों से शोभायमान, शुद्ध, कलंक रहित, श्रेष्ठ चारित्र के धारी और पापियों के मान को मर्दन करने वाले निरंश भव्य जिनेन्द्र मुझ पर प्रसन्न हों।

प्रबोध विबुद्ध जगत्त्रयसार, अनन्त-चतुष्टय सागर पार।
निवारित-सर्व-परिग्रह-भार, प्रसीद जिनोत्तम भव्य-सुतार।।4।।

अर्थ - हे अपने ज्ञान से तीनों लोकों को सजग करने वाले, अनन्त चतुष्टय से युक्त, संसार समुद्र से पारंगत, अन्तरंग-बहिरंग सब प्रकार के परिग्रह से रहित और भव्यों को तारने वाले जिनेन्द्र मुझ पर प्रसन्न हों।

तपोभर-दारित-कर्म-कलंक, विरोग विभोग वियोग निशंक।
अखण्डित चिन्मय-देह प्रकाश, प्रसीद जिनोत्तम मुक्ति सुसंग।।5।।

हे तपश्चरण के भार से कर्म कलंक को नष्ट करने वाले नीरोग, भोग रहित, सबसे अलग, शंका रहित, अखण्ड और चैतन्यमय देह का प्रकाश करने वाले मुक्ति में स्थित जिनेन्द्र मुझ पर प्रसन्न हों।

विवर्जित-दोष गुणौघ-करण्ड, प्रसारित-मान-तमो-मद-दण्ड।
अपार-भवोदधि-तार-तरण्ड, प्रसीद जिनोत्तम मुक्ति सुसंग।।6।।

हे अठारह दोषों से रहित, गुणों के पिटारे, मान रूपी अन्धकार को खण्डित करने वाले और अपार संसार, रूपी समुद्र से तारने के लिए नौका के समान मुक्ति में स्थित जिनेन्द्र मुझ पर प्रसन्न हों।

(मालनी छन्द)

दृगवगम-चरित्रः प्राप्त-संसार-पाराः
सकल-शशि-निभास्याः सर्व-सौख्यादि-वासाः।
विदित-भव-विशिष्टाः प्रोल्लसज्ज्ञान-शिष्टाः
ददतु जिनवरास्ते मुक्ति-साम्राज्य-लक्ष्मीम्।।7।।

क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिक ज्ञान और क्षायिक चारित्र के धारी, संसार से पार होने वाले, पूर्ण चन्द्रमा के समान मुख वाले, अनंत सुख से संयुक्त, अनेक भवों को जानने वाले और प्रकाशमान ज्ञान से संयुक्त वे जिनेन्द्र भगवान हमें मुक्ति रूपी साम्राज्य लक्ष्मी प्रदान करें।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व व्रताधिपं सारं सर्व-सौख्य-करं सताम्।
पुष्पांजलि-व्रतं पुष्वाद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियम्।।

सभी व्रतों में श्रेष्ठ सारभूत और धर्मात्माओं को सुखकारी पुष्पांजलि व्रत आपको शाश्वतिक लक्ष्मी प्रदान करें।

(इत्याशीर्वादः)

अचल मेरु-3

जिनान् संस्थापयाम्यत्राह्वाननादि विधानतः।
धातकी-पश्चिमाशास्थाचल-मेरु-प्रवर्त्तिनः।।

अर्थ - धातकी खण्ड की पश्चिम दिशा में स्थित अचलमेरु सम्बंधी जिनेन्द्रों की आह्वानन् आदि विधि से मैं स्थापना करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अनुष्टुप छन्द)

सौरभ्याहृत-सद्गन्ध-सारया जलधारया।
अचल-मेरु-जिनेन्द्राय जरा-जन्म-विनाशिने।।1।।

अर्थ - सुगन्धित श्रेष्ठ जल की धारा से जरा और मरण का नाश करने वाले अचल मेरु सम्बन्धी जिनेन्द्रों की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चारु-चन्दन-कर्पूर-काश्मीरादि-विलेपनैः।
अचल-मेरु-जिनेन्द्राय जरा-जन्म-विनाशिने।।2।।

अर्थ - सुन्दर चंदन, कपूर और केशर आदि विलेपन से जरा और जन्म का नाश करने वाले अचल मेरु सम्बन्धी जिनेन्द्रों की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षतैरक्षतानन्द-सुख-दान-विधानकैः।
अचल-मेरु-जिनेन्द्राय जरा-जन्म-विनाशिने।।3।।

अर्थ- अविनाशी आनन्द और सुख देने वाले सुन्दर अक्षतों से जरा और जन्म का नाश करने वाले अचल मेरु सम्बन्धी जिनेन्द्रों की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जाति-कुन्दादि-राजीव-चम्पकानेक पल्लवैः।
अचल-मेरु-जिनेन्द्राय जरा-जन्म-विनाशिने।।4।।

अर्थ - चमेली, कुन्द, कमल और चम्पा आदि अनेक फूलों से जरा और जन्म का नाश करने वाले अचल मेरु सम्बन्धी जिनेन्द्रों की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खाद्य-स्वाद्यपदैर्द्रव्यैः सन्नाज्यैः सुकृतैरिव।
अचल-मेरु-जिनेन्द्राय जरा-जन्म-विनाशिने।।5।।

अर्थ - मानो सुकृत ही हों ऐसे खाद्य और स्वाद्य आदि उत्तम पक्वानों से जरा और जन्म का नाश करने वाले अचल मेरु सम्बन्धी जिनेन्द्रों की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशाग्रै प्रस्फुरद्दीपैर्दीपैः पुण्य-जनैरिव।
अचल-मेरु-जिनेन्द्राय जरा-जन्म-विनाशिने।।6।।

अर्थ - मानो पुण्यजन ही हों ऐसे प्रकाशमान दीपों से जरा और जन्म का विनाश करने वाले अचल मेरु सम्बन्धी जिनेन्द्रों की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपैः संधूपितानेक-कर्मभिर्धू पदायिने।
अचल-मेरु-जिनेन्द्राय जरा-जन्म-विनाशिने।।7।।

अर्थ - अनेक कर्मों को जलाने में समर्थ धूप से सुगन्ध देने वाले तथा जरा और जन्म का विनाश करने वाले अचल मेरु सम्बन्धी जिनेन्द्रों की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नारिकेलादिभिः पुङ्गैः फलैः पुण्यजनैरिव।
अचल-मेरु-जिनेन्द्राय जरा-जन्म-विनाशिने।।8।।

अर्थ - मानो पुण्यजन ही हों ऐसे नारियल आदि बड़े-बड़े फलों से जरा और जन्म का नाश करने वाले अचल मेरु सम्बन्धी जिनेन्द्रों की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलगन्धाक्षतानेक-पुष्प नैवेद्य दीपकैः।
अचल-मेरु-जिनेन्द्राय जरा-जन्म-विनाशिने।।9।।

अर्थ - जल, गन्ध, अक्षत, अनेक प्रकार के पुष्प, नैवेद्य और दीपक से जरा और जन्म का नाश करने वाले अचल मेरु सम्बन्धी जिनेन्द्रों की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(वंशस्थ छन्द)

श्रीधातकीखण्ड-विदेह-संस्थं, तृतीयमेरुं जिन-संप्रयुक्तम्।
शुम्भत्प्रदीपोत्कर-रत्नचन्द्रं, संस्तौम्यहं सद्गुण-वर्द्धमानम्।।1।।

अर्थ - श्रीधातकी खण्ड के विदेह में स्थित जिन-प्रतिमाओं से युक्त, सुशोभित रत्न और चन्द्र प्रदीपों से युक्त और उत्तम पार्थिव गुणों से वर्द्धमान तृतीय मेरु की मैं स्तुति करता हूँ।

सुर-खेचर-किन्नर-देव-गमं, यात्रागत-चरण-मुनीन्द्र-रणं।
नाना-रचना-रचित-प्रसरं, वन्दे गिरिराजमहं विभरं।।2।।

जहाँ देव, विद्याधर और किन्नर देवों का आगमन होता रहता है, जहाँ यात्रा निमित्त आये हुए मुनिवरों के चरणों का शब्द होता है और जहाँ विविध प्रकार की रचना का प्रसार हो रहा है, वैभव-सम्पन्न उस गिरिराज की मैं वंदना करता हूँ।

मणि-भूषित-पार्श्व-युगं-सलयं, सुविराजित-प्रतिमा-जिन-निलयं।
जिनवर-मंगल-गुण-गण-निचयं, वन्दे गिरिराजमहं विभरं।।3।।

जिसके दोनों पार्श्व मणियों से विभूषित हो रहे हैं, जो पर्यायार्थिक दृष्टि से विनाशक हैं, जो जिन प्रतिमाओं के मंदिरों से सुशोभित है और जहाँ जिनवर के गुणों का मंगलगान हो रहा है, वैभव सम्पन्न उस गिरिराज की मैं वंदना करता हूँ।

भाविक-भावित-भवि-शोभं, संश्रित-सुर-नर-कृत-घन-भोगं।
सम्भव-भुव-जल-गुण-शुभ-प्रकरं, वन्दे अचल गिरिमह विभरं।।4।।

जो भव्यो की भावपूर्ण भावनाओं से सुशोभित हो रहा है, देव और मनुष्य जिसके आश्रय से प्रचुर भोगी का भोग करते रहते हैं और जो पृथ्वी में से निकले हुए जल के शुभ गुणों से युक्त है, वैभव सम्पन्न उस गिरिराज की मैं वन्दना करता हैं।

भद्रशाल-वन-परिधि-विशालं, दशविध-कल्पवृक्ष-कर-मालं।
कनक-वर्ण-लक्षण-तनुमैन्द्रं, वन्दे अचल गिरिमह विभरं।।5।।

जहाँ पर भद्रशाल वन की विशाल परिधि है, जो दश प्रकार के कल्प वृक्षों की माला से युक्त है, जिसका रंग सोने के समान है और जो पर्वतों में प्रधान है, वैभव सम्पन्न उस गिरिराज की मैं वंदना करता हूँ।

स्फटिक-शिला-धर-कलश-निबद्धं, क्षीरोदधिनीरं जल-शुद्धं।
नाना-विभवं जन-तप-हारं, वन्दे अचल गिरिमह विभरं।।6।।

जो कलश युक्त स्फटिक मणि की शिला को धारण करता है, क्षीर समुद्र के जल से विशुद्ध है, प्राणियों के योग्य नाना प्रकार के वैभव से युक्त है और जनता के ताप को हारने वाला है, वैभव सम्पन्न उस गिरिराज की मैं वंदना करता हूँ।

विविध-मणि निबद्धं भूगताभद्रशालं, कनक-रचित-भक्तिं बद्धसोपान-पंक्तिम्।
स्फटिक-विमल-सान्द्रं पाण्डुकाव्याप्त-देशं, भजत गिरिवरं तं ह्यर्घ्यपात्रैरनर्घैः।।7।।

जो विविध प्रकार के मणियों से निबद्ध है, जिसके चारों और पृथ्वीगत भद्रशाल बन फैला हुआ है, जिसके पटल स्वर्ण रचित हैं, जो सोपान-पंक्ति से युक्त है, जो निर्मल स्फटिक

मणि से सधन हो रहा है और जिसकी चारों ओर का ऊपर का भाग पाण्डुक बन से व्याप्त है उस गिरिराज की अमूल्य अर्घ्य पात्र से पूजा करो।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्वदक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वव्रताधिपं सारं मुक्तिसौख्यकरं सताम्।
पुष्पांजलिव्रतं पुष्पाद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियम्।।

सभी व्रतों में श्रेष्ठ, सारभूत और सज्जन पुरुषों को मुक्ति सुख देने वाला यह पुष्पांजलि व्रत आप लोगों को शाश्वत मोक्ष-लक्ष्मी प्रदान करे। आशीर्वादः

मन्दर मेरू

जिनान् संस्थापयाम्यत्राह्वाननादिविधनतः।
मेरु-मंदिर-नामानः पुष्पांजलि-विशुद्धये।।1।।

अर्थ - मैं पुष्पांजलि व्रत की विशुद्धता के लिए आह्वानन आदि विधि मन्दिर मेरु सम्बंधी जिन प्रतिमाओं की स्थापना करता हूँ।

ॐ ह्रीं मंदिरमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(वसन्ततिलजा छन्द)

गंगागतैर्जल-चयैः सुपवित्रितांगै, रम्यैः-सुशीतलतरैर्भव-ताप-हारैः।
मेरुं यजेऽखिल सुरेन्द्र-समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत पुष्कर द्वीप संस्थम्।।1।।

अर्थ - अंग को पवित्र करने वाले, संसार के आतप को हरने वाले और अत्यन्त ठण्डे गंगा के रमणीक जल से सभी इन्द्रों से पूजनीय पुष्कर द्वीप में स्थित श्री मंदिर मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीर कुंकुम रसैर्हरि चन्दनाद्यैर्-,गन्धोत्कटैर्वन-भवैर्घनसार-मिश्रैः।
मेरुं यजेऽखिल-सुरेन्द्र-समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत पुष्कर द्वीप संस्थम्।।2।।

अर्थ - वन में उत्पन्न हुए, अत्यन्त, सुगंधित और कपूर मिश्रित काश्मीरी केशर के रस से तथा हरिचंदन आदि से सभी इन्द्रों से पूजनीय पुष्कर द्वीप में स्थित श्री मंदिर मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रांशु-गौर-विहितैः कलमाक्षतौघै-र्घ्राणप्रियैरवितथैर्विमलै-रखण्डैः।
मेरुं यजेऽखिल सुरेन्द्र-समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत पुष्कर द्वीप संस्थम्।।3।।

अर्थ-चन्द्रमा के समान स्वच्छ, घ्राण इन्द्रिय के लिए प्रिय लगने वाले, सच्चे, निर्मल और अखण्ड कलम धान्य के अक्षतों से सब इन्द्रों से पूजनीय पुष्कर द्वीप में स्थित श्री मंदिर मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

गन्धागतालि-निवहैः शुभ चम्पकादि-पुष्पोत्करैरम-रपुष्प-युतैर्मनोज्ञैः।
मेरुं यजेऽखिल सुरेन्द्र-समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत पुष्कर द्वीप संस्थम्।।4।।

अर्थ - सुगंध से जिन पर भौरे मँढरा रहे हैं ऐसे कल्प वृक्ष के पुष्प मिश्रित चम्पक आदि सुंदर पुष्पों से इन्द्रों द्वारा पूज्य पुष्कर द्वीप के श्री मंदिर मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णादि-पात्र-निहितैर्घृत-पक्क-खण्डै-र्नानाविधैर्घृतवरै रसनेन्द्रियेष्टैः।
मेरुं यजेऽखिल सुरेन्द्र-समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत पुष्कर द्वीप संस्थम्।।5।।

अर्थ - सोने के वर्तन में रखे हुए, और रसनेन्द्रिय के लिए प्रिय अनेक प्रकार के घी के पकवानों से इन्द्रों द्वारा पूजनीय पुष्कर द्वीप के श्री मंदिर मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर-दीप-निचयैर्निहतान्धकारैः, सद्भासितांशु-निकरैः शुभ-कील-जालैः।
मेरुं यजेऽखिल सुरेन्द्र-समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत पुष्कर द्वीप संस्थम्।।6।।

अर्थ-जिनकी किरणें भासमास हो रही हैं और मनोहर ज्योति निकल रही है उन अन्धकार को नष्ट करने वाले अनेक दीपकों से इन्द्रों द्वारा पूजनीय पुष्कर द्वीप के श्री मंदिर मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कालागुरु-त्रिदश-दारु-सुचन्दनादि-द्रव्योद्भवैः सुभग-गन्ध-सधूप-धूम्रै।।
मेरुं यजेऽखिल सुरेन्द्र-समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत पुष्कर द्वीप संस्थम्।।7।।

अर्थ - कालागुरु, देवदारु और हरिचन्दन आदि सुगंधित वस्तुओं की सुन्दर धूप बनाकर उसके धूँए से इन्द्रों द्वारा पूजनीय पुष्कर द्वीप के श्री मंदिर मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नारंग-पूग-पनसाम्र-सुमोच-चोचैः, शीलांगलि-प्रमुख-भव्य-फलैः सुरम्यैः।
मेरुं यजेऽखिल सुरेन्द्र-समर्चनीयं, श्रीमंदिरं वितत पुष्कर द्वीप संस्थम्।।8।।

अर्थ - नारंगी, सुपाडी, पनस, आम, केला, नारियल और शीलांगलि प्रमुख सुन्दर तथा ताजे फलों से इन्द्रों से पूजनीय पुष्कर द्वीप में स्थित श्री मंदिर मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलैः सुगंधाच्छत-चारु-पुष्पैर्नैवेद्य-दीपैर्वर-धूप-वर्गैः।
फलैर्महार्घ्यं ह्यवतारयामि श्रीरत्नचन्द्रो यति-वृन्द सेव्यः।।9।।

अर्थ - जल, चन्दन, अक्षत, मनोहर पुष्प, नैवेद्य, श्रेष्ठ फूल, और फलों से अतिथि द्वारा पूयनीय श्री मंदिर मेरु का मैं अधोवतरण करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

प्रोद्यत्षोडश-लक्ष-योजन-मित-श्री-पुष्करार्ध-स्थितः
श्रीमत्पूर्व-विदेह-मन्दिर-गिरिर्देवेन्द्र-वृन्दार्चितः।
चंचत्पंच-सुवर्ण-रत्न-जडितो नाना-द्रुमौघोर्जितः
तत्सम्बन्धि-जिनौकसां गुण-गणान् संस्तौम्यहं सर्वदा।।1।।

सोलह लाख योजन का शोभा सम्पन्न पुष्करार्द्ध द्वीप है। उसके पूर्व विदेह में इन्द्रों द्वारा पूज्य मन्दिर नाम का सुमेरु पर्वत है जो सुवर्ण और पाँच प्रकार के रत्नों से जड़ा हुआ है और नाना वृक्षों से संकीर्ण है उस पर्वत सम्बन्धी जिन-मंदिरों के गुणों की मैं सदा स्तुति करता हूँ।

देव-विद्याधरैश्चासुरैश्चर्चितं, किन्नरी-गीत-कल-गान-संजृंभितम्।
नर्तितानेक-देवांगना-सुन्दरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरम्।।2।।

देव, विद्याधर और असुर जिनकी पूजा करते हैं, किन्नरियों के गीतों की मधुर ध्वनि से जो मुखरित हो रहे हैं, अनेक देवांगनाएँ जहाँ नृत्य करती हैं उन दैदीप्यमान जिन मन्दिरों की मैं पूजा करता हूँ।

जन्मकल्याण-संमोहितामर-बलं, दर्शितानेक-देवांगना-सुन्दरम्।
प्रोल्लसत्केतु-मालालयैः सुन्दरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरम्।।3।।

जहाँ जिनेन्द्र के जन्म-कल्याणक महोत्सव से देवों की सेना मोह ली जाती है अनेक सुन्दर देवांगनाएँ दिखाई देती हैं और जो फहराती हुई अनेक प्रकार की ध्वजाओं से शोभायमान हो रहे हैं उन दैदीप्यमान जिन-मन्दिरों की मैं पूजा करता हूँ।

धूप-घट-धूपितावास-शोभा-वरं, रत्न-स्तम्भोर्जितालीभिराशाकुलम्।
अष्ट-मंगल-महाद्रव्य-चय-सुन्दरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरम्।।4।।

जहाँ अनेक धूपघटों से कोठे महक रहे हैं, रत्न के खम्भों पर जहाँ चारों ओर भौंरे मँडरा रहे हैं और जहाँ आठ महा मंगल द्रव्य रखे हुए हैं, उन दैदीप्यमान जिन-मन्दिरों की मैं पूजा करता हूँ।

ताल-वीणा-मृदंगादि-पटह-स्वरं, कल्पतरु-पुष्प-वापी-तडागाकरम्।
जंघचारण-मुनिप्रागताशाकरम्, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरम्।।5।।

जहाँ सदा ताल, वीणा, मृदंग और नगाड़े आदि वजते रहते हैं, कल्प वृक्ष, उनके फूल, बावड़ी और तालाब आदि मौजूद है और सदा जंघाचरण ऋद्धिधारी मुनियों का आवागमन बना रहता है, उन दैदीप्यमान जिन-मन्दिरों की मैं पूजा करता हूँ।

रुचिरवर-मणिमयैः गोपुरैः संयुतं, हर्म्यावली-लसन्मुक्त-मालावृतम्।
तुंग-तोरण-लसद्घंटिका-भंगुरं, श्रीजिनागारवारं भजे भासुरम्।।6।।

जो अत्यन्त सुन्दर मणिमयी सुन्दर दरवाजों से युक्त हैं, जहाँ के प्रसादों में मोतियों की मालायें लटक रही हैं और जो ऊँचे तोरणों में लटकती हुई घण्टिकाओं से व्याप्त हैं उन दैदीप्यमान जिन-मन्दिरों की मैं पूजा करता हूँ।

विविध-विषय-भव्यं भव्य-संसारतारं,
शतमख-शत-पूज्यं प्राप्त-सज्ज्ञान-पारम्।
विषय-विषम-दुष्ट-व्याल-पक्षीशमीशं,
जिनवर-निकरं तं रत्नचन्द्रो भजेऽहम्।।7।।

अनेक प्रकार की सामग्री से जो सुन्दर है, भव्य प्राणियों को संसार से तारने वाले हैं, सैकड़ों इंद्र जिनकी पूजा करते हैं, जो सम्यज्ञान के पार को प्राप्त हो चुके हैं और विषय रूपी भयंकर एवं दुष्ट सर्प के लिए जो गमन के समान है उन जिनेन्द्र देव की प्रतिमाओं की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं मन्दिरमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व-व्रताधिपं सारं सर्व-सौख्य-करं सताम्।
पुष्पांजलि-व्रतं पुष्यद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियं।।

सभी व्रतों में श्रेष्ठ, सारभूत और सज्जनों को सुख देने वाला यह पुष्पांजलि व्रत आप लोगों को शाश्वतिक मोक्षलक्ष्मी प्रदान करे।

(इत्याशीर्वादः)

विद्युन्माली मेरु-5

जिनान्संस्थाप्याम्यत्राह्वाननादि विधानतः।
पुष्करे पश्चिमाशास्थान् विद्युन्माालि-प्रवर्तिनः।।

अर्थ - पुष्कर द्वीप के पश्चिम दिशा में स्थित विद्युन्माली मेरु सम्बन्धि जिन-प्रतिमाओं की मैं आह्वानन आदि विधि से यहाँ पर स्थापना करता हूँ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

निर्मलैः सुशीतलैर्महापगा-भवैर्वनैः,
शातकुम्भ-कुम्भगैर्जगज्जनांग-तापहैः।
जैन-जन्म-मज्जनाम्भसः प्लवातिपावनैः,
पंचमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम्।।1।।

अर्थ- संसार के जीवों के शरीर के ताप को हरने वाले जिनेन्द्र देव के जन्माभिषेक के जल के प्रवाह से पवित्र हुए महानदी के स्वर्ण कुम्भ में रखे हुए शीतल जल से मुक्ति दायक पाँचवें सुमेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दनैः सुचन्द्रसार-मिश्रितैः सुगन्धिभि-
रर्क-वेणु-मूलभूत-वर्जितैर्गुणोज्ज्वलैः।
जैन-जन्म-मज्जनाम्भसः प्लवातिपावनं,
पंचमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम्।।2।।

अर्थ - आक, बांस और जड़ आदि से रहित अपने सुगंध गुण से प्रकाशमान तथा कपूर से मिश्रित सुगंधित चंदन से जिनेन्द्र देव के जन्माभिषेक के जल के प्रवाह से पवित्र और मुक्ति दायक पाँचवें सुमेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्दु-रश्मि-हार-यष्टि-हेम-मास-भासितैः
रक्षतै-रखण्डितैः सुवासितैर्मनः प्रियैः।
जैन-जन्म-मज्जनाम्भसः प्लवातिपावनं,
पंचमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम्।।3।।

अर्थ - चन्द्रकिरण, हारलता और स्वर्ण आदि की तरह स्वच्छ अखण्ड और रुचिकर सुवासित अक्षतों से जिनेन्द्र देव के जन्माभिषेक सम्बन्धी जल के प्रवाह से पवित्र तथा मुक्ति दायक पाँचवें सुमेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

गन्ध-लुब्ध-षट्पदैः सुपारिजात-पुष्पकैः,
वारिजाति-कुन्द-देवपुष्प-मालती-भवैः।
जैन-जन्म-मज्जनाम्भसः प्लवातिपावनं,
पंचमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम्।।4।।

अर्थ - सुगंध के लोभ से जिन पर भौंरे गुँजार कर रहे हैं ऐसे पारिजात, कमल, कुन्द, लवंग और मालती आदि फूलों से जिनेन्द्र देव! के जन्माभिषेक सम्बन्धी जल से पवित्र और मोक्षदायक पाँचवें सुमेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राज्य-पूर-पूरितैः सुखज्जकैः सुमोदकैः
इन्द्रिय-प्रभूत्करैः सुचारुभिश्चरुत्करैः।
जैन-जन्म-मज्जनाम्भसः प्लवातिपावनं,
पंचमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम्।।5।।

अर्थ - रसनेन्द्रिय को तृप्त करने वाले और घी के पूर से पूरित खाजे और लड्डू आदि सुन्दर नैवेद्य से जिनेन्द्र देव के जन्माभिषेक सम्बन्धी जल से पवित्र और मोक्षदायक पाँचवें सुमेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्धकार-भार-नाश-कारणैर्दशेन्धनैः,
रत्न-सोमजैः प्रदीप्ति-भूषितैः शिखोज्ज्वलैः।
जैन-जन्म-मज्जनाम्भसः प्लवातिपावनं,
पंचमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम्।।6।।

अर्थ - अंधकार समूह का नाश करने वाले, मणिभवी अपनी कांति से सुशोभित तथा उज्ज्वल शिखा वाले दीपकों से जिनेन्द्र देव के जन्माभिषेक सम्बन्धी जल के प्रवाह से पवित्र और मोक्षदायक पाँचवें सुमेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सिल्हिकागुरुद्भवैः सुधूपकैर्नभोगतैर्-
गन्धिताश-चक्र-केश-वृन्दकैः प्रशस्तकैः।
जैन-जन्म-मज्जनाम्भसः प्लवातिपावनं,
पंचमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम्।।7।।

अर्थ - आकाश में फैले हुए धुएँ से दशों दिशाओं को सुगंधित करने वाले ऐसे लोहवान और अगुरु आदि की धूप से जिनेन्द्र देव के अभिषेक सम्बन्धी जल से पवित्र और मोक्षदायक पाँचवें सुमेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कम्र-दाडिमैः सुमोच-चोचकैः शुभैः फलैर्-
मातुलिंग-नारिकेल-पूग-चूतकादिभिः।
जैन-जन्म-मज्जनाम्भसः प्लवातिपावनं,
पंचमं सुमन्दिरं महाम्यहं शिवप्रदम्।।8।।

अर्थ-सुन्दर अनार, केला, अण्डबिजौरा, नारियल, सुपारी और आम आदि श्रेष्ठ फलों से जिनेन्द्र देव के जन्माभिषेक सम्बन्धी जल से पवित्र और मोक्षदायक पाँचवें सुमेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल-गन्धाक्षतैः पुष्पैश्चरु-दीप सूधूपकैः।
फलैरुत्तारयाम्यर्घ्यं विद्युन्मालि-प्रवर्तिनाम्।।9।।

अर्थ - जल, गंध, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप और फल से सुमेरु सम्बंधी जिन प्रतिमाओं को मैं अर्घ्य अर्पित करता हूँ।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्यजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

स्तुवे मन्दिरं पंचमं सद्गुणौधं,
समुत्तुंग-चैत्यालयं भासुरांगम्।
चलद्रत्न - सोपान - विद्याधरीशं,
नमद्देव-नागेन्द्र-मर्त्येन्द्र-वृन्दम्।।1।।

जहाँ पर उत्तुंग चैत्यालय बने हुए हैं, जिसकी रत्नों की सीढ़ियों पर विद्याधर नृप चढ़ते-उतरते हैं, तथा इन्द्र, धरणेन्द्र और चक्रवर्ती जिन्हें नमस्कार करते हैं, अनेक विशेषताओं से परिपूर्ण उस दैदीप्यमान पाँचवें सुमेरु की मैं स्तुति करता हूँ।

भद्रशालाभिधारण्य-संशोभितं, कोकिलानां कलालाप-संकूजितम्।
पुष्कराद्धाचले संस्थितं मन्दिरं, चंचलामालिनं पूजये सुन्दरम्।।2।।

जो भद्रशाल नामक बन से सुशोभित है और कोयलें जहाँ मधुर गान करती हैं, पुष्करार्द्ध द्वीप में स्थित उस सुन्दर विद्युन्माली मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

नन्दनैर्नन्दितानेकलोकाकरैर्-भ्राजमानं सदाशोकवृक्षोत्करैः।
पुष्कराद्धाचले संस्थितं मन्दिरं, चंचलामालिनं पूजये सुन्दरम्।।3।।

जो अनेक प्राणियों को आनन्द देने वाले हैं और अशोक वृक्षों से शोभायमान हैं ऐसे नन्दन वनों से सुशोभित पुष्करार्द्ध द्वीपस्थ सुन्दर विद्युन्माली मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

सौमनस्यैर्वनैः कल्पवृक्षादिभिः, भ्राजमानं च बुधगारकेत्वादिभिः।
पुष्कराद्धाचले संस्थितं मन्दिरं, चंचलामालिनं पूजये सुन्दरम्।।4।।

कल्पवृक्ष आदि से युक्त और देवों के प्रासाद में लगी हुई ध्वजाओं से युक्त सौमनस वनों से शोभायमान पुष्करार्द्ध द्वीपस्थ सुन्दर विद्युन्माली मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

ऊर्ध्वगैः पाण्डुकैः काननै राजितं, पाण्डुकाख्याशिलाभिः समालिंगितम्।
पुष्कराद्धाचले संस्थितं मन्दिरं, चंचलामालिनं पूजये सुन्दरम्।।5।।

सबसे ऊपर पाण्डुक शिलाओं से युक्त व पाण्डुक बनों से सुशोभित पुष्करार्द्ध द्वीपस्थ सुन्दर विद्युन्माली मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

निर्जितानेकरत्नप्रभाभासुरं, दिक्चतुष्काश्रितार्हत्प्रभाभासुरम्।
पुष्कराद्धाचले संस्थितं मन्दिरं, चंचलामालिनं पूजये सुन्दरम्।।6।।

दूसरों को तिरस्कृत करने वाले रत्नों की प्रभा से देदीप्यमान और चारों दिशाओं में स्थित जिन प्रतिमाओं की प्रभा से प्रकाशमान पुष्करार्द्ध द्वीपस्थ सुन्दर विद्युन्माली मेरु की मैं पूजा करता हूँ।

घत्ता

घण्टा-तोरण-तारिकाब्ज-कलशैश्छत्राष्ट-द्रव्यैः परैः,
श्री-भामण्डल-चामरैः सुरचितैश्चंद्रोपकरणादिभिः।
त्रैकाल्ये वर-पुष्प-जाप्य-जपनैर्जैनः करोत्वर्चनां,
भव्यैर्दान-परायणैः कृतदयैः पुष्पांजलेः शुद्धये।।7।।

घण्टा, तोरण झालर, कमलों से सुशोभित कलश, छत्र, आठ मंगल द्रव्य, लक्ष्मी, भामण्डल, चमर और उत्तम प्रकार से बनाया गया चंदोवा इन द्रव्यों को लेकर तीनों काल में उत्तम पुण्य जाप जपने वाले, दान देने में तत्पर तथा दयायुक्त भव्य जीवों के साथ आत्म शुद्धि के लिए उत्तम पुष्पांजलि व्रत करना चाहिए।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालिमेरुसम्बन्धिभद्रशाल-नन्दन-सौमनस-पाण्डुक-वनसम्बन्धि-पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरस्थजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वव्रताधिपं सारं सर्वसौख्यकरं सताम्।
पुष्पांजलिव्रतं पुष्याद्युष्माकं शाश्वतीं श्रियम्।।

सभी व्रतों में श्रेष्ठ, सारभूत और सज्जनों को सुखकारी पुष्पांजलिव्रत आप सबको शाश्वतिक लक्ष्मी प्रदान करे।

(जयमाला-इत्याशीर्वादः)

मोक्ष सौख्यस्यकर्तृणां भोक्तृणी शिव सम्पदाम।
पुष्पांजलि प्रकुर्वेहं जगच्छाक्ति विधायिना।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलि क्षिपेत्

पंचमेरु जयमाला

(बसंत तिलका छन्द)

तीर्थंकर-स्नपन नीर-पवित्रजातः, तुंगोऽस्ति यस्त्रिभुवने निखिलाद्रितोऽपि।
देवेन्द्र-दानव-नरेन्द्र-खगेन्द्र वंद्यः, तं श्री पंचमेरु गिरिं सततं नमामि।।1।।
यो भद्र सालवन-नंदन-सौमनस्यैः, भातीह पांडुक वनेन च शाश्वतोऽपि।
चैत्यालयान् प्रतिवनं चतुरो विधत्ते, तं श्री पंचमेरु गिरिं सततं नमामि।।2।।
जन्माभिषेक विध्ये जिनबालकानाम्, वंद्याः सदा यतिवरैरपि पांडुकाद्याः।
धत्ते विदिक्षु महनीय शिलाश्-चतसृः, तं श्री पंचमेरु गिरिं सततं नमामि।।3।।
योगीश्वराः प्रतिदिनं विहरन्ति यत्र, शान्त्यैषिणः समरसैक-पिपासवश्च।
ते चारणर्द्धि-सफलं खलु कुर्वतेऽत्र, तं श्री पंचमेरु गिरिं सततं नमामि।।4।।
ये प्रीतितो गिरिवरं सततं नमन्ति, वंदन्त एव च परोक्ष मपीह भक्त्या।
ते प्राप्नुवंति किल ज्ञानमति श्रियं हि, तं श्री पंचमेरु गिरिं सततं नमामि।।5।।

दोहा - संसार सागरोत्तीर्ण मोक्ष सौख्य प्रदायनीय।
नमामि त्रियोगेन पंचमेरु जिनालयं।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि जिन चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं नि.स्वाहा।

दोहा - मोक्ष सौख्य प्रदातारां, कर्त्तृणां शिव सम्पदाम्।
जिनार्चा प्रकुर्वेऽहं, 'विशद' शांति विधायिना।।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

आरती

(तर्ज - आज करें हम.....)

पंच मेरु की करते हैं हम, आरति मंगलकारी।
दीप जलाकर लाए अनुपम, जिनवर के दरबार।। हो जिनवर.....1
प्रथम सुदर्शन मेरू में शुभ, चैत्यालय शुभकारी।
चार-चार हैं चतुर्दिशा में, अनुपम मंगलकारी।। हो जिनवर.....2
पूर्व धातकी खण्ड में मेरू, विजय नाम शुभ गाया।
लाख चौरासी योजन ऊँचा, आगम में बतलाया।। हो जिनवर.....3
अचल मेरु है खण्ड धातकी, पश्चिम में शुभकारी।
स्वर्ण कांति की आभा वाला, पूजें सब नर-नारी। । हो जिनवर.....4
पुष्करार्द्ध पूरब में मेरू, मन्दर नाम बताया।
जिनबिम्बों से युक्त जिनालय, की है अनुपम माया।। हो जिनवर.....5
पश्चिम पुष्करार्द्ध में मेरू, विद्युन्माली जानो।
रत्नमयी हैं 'विशद' जिनालय, धर्म के आलय मानो।। हो जिनवर.....6
घृत के पावन दीप जलाकर, पावन आरती गाएँ।
भक्ति भाव से गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाएँ।। हो जिनवर.....7

नन्दीश्वर का अर्घ्य

(उपजाति छन्द)

सन्नीर गंध धवलाक्षत पुष्पकैश्च, नैवेद्य दीपवर धूप फलैश्च सारै।
नन्दीश्वर सु द्वीप जिनालयार्चाः, समर्चये जिन विम्बानि भक्त्या।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वर द्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम पूज्य आचार्य 108 श्री विशद सागर जी महाराज का अर्घ

प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर ! थाल सजाकर लाये हैं।
महाव्रतों को धारण कर लें, मन में भाव बनाये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अर्घ समर्पित करते हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें गुरु, चरणों में सिर धरते हैं॥

ॐ ह्रीं 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

आचार्य गुरूवर श्री विशदसागर जी की आरती

ॐ जय विशद सिन्धु गुरुवर, स्वामी विशद सिन्धु गुरुवर।
तुम हो गुरु हमारे-2, हम तुमने अनुचर।। ॐ जय ।। टेक।।
ग्राम कुपी में जन्म लिया माँ, इन्दर उर आये-स्वामी इन्दर...।
धन्य पिताश्री नाथूराम जी-2, श्रेष्ठ पुत्र पाये।। ॐ जय...
तीर्थ वन्दना करने हेतु, सम्मेद शिखर आए-स्वामी सम्मेद...।
विमल सिन्धु के दर्शन करके-2, व्रत प्रतिमा पाए।। ॐ जय...
विजय प्राप्त करने कर्मों पर, परिजन तज आए-स्वामी परिजन...।
सिद्ध क्षेत्र श्रेयांश गिरि पर-2, ऐलक पद पाए।। ॐ जय...
विराग सिन्धु गुरुवर से, मुनिव्रत ग्रहण किए-स्वामी मुनि...।
द्रोणागिरि में दीक्षा लेकर-2, निज में लीन हुए।। ॐ जय...
भरत सिन्धु गुरुवर ने, पद आचार्य दिया-स्वामी पद...।
मालपुरा नगरी ने-2, पावन श्रेय लिया।। ॐ जय...
पूजा विधान अनेको लिखकर, प्रभु के गुण गाए-स्वामी प्रभु...।
विशद आरती करके हमने-2, गुरु के गुण गाए।। ॐ जय...
ॐ जय विशद सिन्धु गुरुवर, स्वामी विशद सिन्धु गुरुवर।
तुम हो गुरु हमारे-2, हम तुमरे अनुचर।। ॐ जय.....

(रचयिता - मुनि विशाल सागर जी)